੧ ਓ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

गउड़ी सुखमनी मः ५ ॥

सलोकु

१ ॐ सति गुर प्रसादि ॥

आदि गुरए नमह ॥ जुगादि गुरए नमह ॥
सतिगुरए नमह ॥ स्री गुरदेवए नमह ॥

उस सब से बड़े (निरंकार-ईश्वर) को, जो सब का आदि है, (मेरी) नमस्कार है। उस सब से बड़े (ईश्वर) को, जो युगों से है (मेरी) नमस्कार है।

सतगुरु को (मेरी) नमस्कार है। गुरुदेव को (मेरी) नमस्कार है।

असटपदी ॥

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥
सिमरउ जासु बिसुंभर एकै ॥
नामु जपत अगनत अनेकै ॥
वेद पुरान सिंमृति सुधाख्यर ॥
कीने राम नाम इक आख्यर ॥
किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥
ता की महिमा गनी न आवै ॥
कांखी एकै दरस तुहारो ॥
नानक उन संगि मोहि उधारो ॥१॥
सुखमनी सुख अंमृत प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ रहाउ ॥

प्रभ कै सिमरनि गरभि न बसै ॥
प्रभ कै सिमरनि दूखु जमु नसै ॥
प्रभ कै सिमरनि कालु परहरै ॥
प्रभ कै सिमरनि दुसमनु टरै ॥
प्रभ सिमरत कछु बिघनु न लागै ॥
प्रभ कै सिमरनि अनदिनु जागै ॥
प्रभ कै सिमरनि भउ न बिआपै ॥
प्रभ कै सिमरनि दुखु न संतापै ॥

असटपदी

(हे प्रभो) मैं नाम का स्मरण करू और स्मरण करके सुख प्राप्त करू
कल्पना और क्लेशों को शरीर से मिटा दूं।

उस एक विश्वंभर का स्मरण करू जिस अनन्त के
नाम को अनेक जीव जप रहे हैं।

शुद्ध अक्षरों वाले वेद पुराण और स्मृतियां एक राम-नाम अक्षर
(के विचार) से प्रकट किये हैं।

जिस के हृदय में प्रभु रचक मात्र भी सर्वोत्तम नाम
बसाता है उस की बड़ाई संख्या में नहीं आती।

हे प्रभो! केवल एक आप के दर्शनाभिलाषी जो भक्त-जन हैं
उन के संग हमारा भी उद्धार करो।

प्रभु का सुखदायक और अमृत नाम सुखों की मणी है। इस नाम
का भक्तजनों के मन में वास है ॥१॥

प्रभु स्मरण कर यह जीव गर्भ में नहीं आता।
प्रभु स्मरण करने से यम का दुःख भाग जाता है।
प्रभु चिन्तन से इस जीव को काल भी त्याग देता है।
प्रभु स्मरण से शत्रु भी दूर होता है।
प्रभु स्मरण से कोई विघ्न नहीं लगता।
प्रभु स्मरण कर यह जीव सर्वदा ज्ञानावस्था में रहता है।
प्रभु स्मरण से जीव को कोई भय नहीं व्यापता।
प्रभु स्मरण से इस जीव को कोई दुःख संताप नहीं देता।

प्रभ का सिमरनु साध कै संगि ॥
सरब निधान नानक हरि रंगि ॥२॥
प्रभ कै सिमरनि रिधि सिधि नउ निधि ॥
प्रभ कै सिमरनि गिआनु धिआनु ततु बुधि ॥
प्रभ कै सिमरनि जप तप पूजा ॥

प्रभ कै सिमरनि बिनसै दूजा ॥
प्रभ कै सिमरनि तीरथ इसनानी ॥
प्रभ कै सिमरनि दरगह मानी ॥
प्रभ कै सिमरनि होइ सु भला ॥

प्रभ कै सिमरनि सुफल फला ॥
से सिमरहि जिन आपि सिमराए ॥

नानक ता कै लागउ पाए ॥३॥
प्रभ का सिमरनु सभ ते ऊचा ॥
प्रभ कै सिमरनि उधरे मूचा ॥
प्रभ कै सिमरनि तृसना बुझै ॥
प्रभ कै सिमरनि सभु किछु सुझै ॥

प्रभ कै सिमरनि नाही जम त्रासा ॥

प्रभु स्मरण साधु संगति से प्राप्त होता है।
हे नानक ! सब पदार्थ प्रभु-प्रेम में ही हैं ॥ २ ॥
प्रभु स्मरण में सब रिद्धि सिद्धि और नव निद्धियां हैं।
प्रभु स्मरण में ज्ञान ध्यान और यथार्थ ज्ञान है।
प्रभु स्मरण में जप तप और सब प्रकार की पूजा (का फल) है।
प्रभु स्मरण कर द्वैत-भाव नष्ट होता है।
प्रभु स्मरण करने में ही सब तीर्थों का स्नान है।
प्रभु चिन्तन से ही प्रभु-दर्बार में मान होता है।
प्रभु चिन्तन से ही यह जीव निश्चै करता है कि जो कुछ हो रहा है वह सब भला ही है, भाव प्रभु-आज्ञा में हो रहा
प्रभु स्मरण करने से इस जीव को श्रेष्ट फल प्राप्त होता है।
प्रभु स्मरण वह लोग करते हैं जिन को स्वयं प्रभु अपना स्मरण देता है।
नानक ! मैं भी उन महापुरुषों के चरणों में पड़ता हूँ ॥ ३ ॥
प्रभु स्मरण सब साधनों में ऊंचा भाव श्रेष्ट है।
प्रभु स्मरण से (मुचा) बहुत जीवों का उद्धार होता है।
प्रभु स्मरण से तृष्णा शान्त होती है।
प्रभु स्मरण से (दिव्य दृष्टि होने के कारण) सब पदार्थों का यथार्थ ज्ञान होता है।
प्रभु स्मरण करने से यम का भय नहीं होता।

प्रभ कै सिमरनि पूरन आसा ॥
प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ ॥
अंमृत नामु रिद माहि समाइ ॥
प्रभ जी बसहि साध की रसना ॥
नानक जन का दासनि दसना ॥४॥
प्रभ कउ सिमरहि से धनवंते ॥
प्रभ कउ सिमरहि से पतिवंते ॥
प्रभ कउ सिमरहि से जन परवान ॥
प्रभ कउ सिमरहि से पुरख प्रधान ॥
प्रभ कउ सिमरहि सि बेमुहताजे ॥
प्रभ कउ सिमरहि सि सरब के राजे ॥
प्रभ कउ सिमरहि से सुख वासी ॥
प्रभ कउ सिमरहि सदा अबिनासी ॥
सिमरनि ते लागे जिन आपि दइआला ॥
नानक जन की मंगै रवाला ॥५॥
प्रभ कउ सिमरहि से परउपकारी ॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन सद बलिहारी ॥

प्रभ कउ सिमरहि से मुख सुहावे ॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन सूखि बिहावे ॥

प्रभु स्मरण करने से यह जीव पूर्णांश होता है।
प्रभु स्मरण से मन की मल दूर होती है। (कारण कि)
अमृत नाम आकर मन मे बसता है।
प्रभु जी सन्तों की रसना पर बसते हैं। नानक ! मैं सन्तों के
दासों का दास हूँ॥ ४॥
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह द्रव्य शाली हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह पतवन्ते हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह लोग माननीय हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह लोग प्रधान हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह लोग वेमुहताजे हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह सब के राजे हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह सुखी हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह चिरंजीवी हैं।
प्रभु स्मरण में वह लोग लगे हैं जिन पर स्वयं प्रभु दयालु हैं।
हम उन सज्जनों की चरण धूलि को मांगते हैं ॥ ५ ॥
जो प्रभु का स्मरण करते सो परोपकारी हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं मैं उन पर अपने आप को
न्योछावर करता हूँ।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह सुन्दर मुख हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं वह सुख पूर्वक अपनी
अवस्था व्यतीत करते हैं।

प्रभ कउ सिमरहि तिन आतमु जीता ॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन निरमल रीता ॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन अनद घनेरे ॥
प्रभ कउ सिमरहि बसहि हरि नेरे ॥
संत कृपा ते अनदिनु जागि ॥
नानक सिमरनु पूरै भागि ॥६॥

प्रभ कै सिमरनि कारज पूरे ॥
प्रभ कै सिमरनि कबहु न झूरे ॥
प्रभ कै सिमरनि हरि गुन बानी ॥

प्रभ कै सिमरनि सहजि समानी ॥
प्रभ कै सिमरनि निहचल आसनु ॥
प्रभ कै सिमरनि कमल बिगासनु ॥
प्रभ कै सिमरनि अनहद झुनकार ॥
प्रभ सिमरन का अंत न पार ॥

सिमरहि से जन जिन कउ प्रभ मइआ ॥
नानक तिन जन सरनी पइआ ॥७॥
हरि सिमरनु करि भगत प्रगटाए ॥
हरि सिमरनि लगि बेद उपाए ॥

जो प्रभु स्मरण करते हैं उन्हों ने अपने मन को जीता है।
जो प्रभु स्मरण करते हैं उन को मर्य्यादा निर्मल है।
जो प्रभु स्मरण करते हैं उन को अधिक सुख प्राप्त होते हैं।
जो प्रभु का स्मरण करते हैं सो प्रभु के समीप बसते हैं।
सन्तों की कृपा कर वह सर्वदा जाग रहे हैं।
हे नानक! प्रभु-स्मरण (इस जीव को) पूर्ण भाग से प्राप्त होता है॥ ६॥

प्रभु स्मरण करने से सब कार्य्य पूर्ण होते हैं।
प्रभु स्मरण करने से कभी पश्चात्ताप नहीं होता।
प्रभु स्मरण करने से यह जीव बाणी कर भी प्रभु-गुणों को गाता है।
प्रभु स्मरण करने से चित्त-वृत्ति प्रभु में समाती है।
प्रभु स्मरण करने से यह जीव अचल-आसन होता है।
प्रभु स्मरण करने से हृदय-कमल प्रफुल्लित होता है।
प्रभु स्मरण करने से निजानन्द का लाभ होता है।
प्रभु स्मरण करने से जो सुख प्राप्त होता है उस के अन्त का पार नहीं है।
प्रभु स्मरण वह लोग करते हैं जिन पर स्वयं प्रभु की कृपा है।
श्री गुरु जी कहते हैं कि मैं भी उन की शरण में पड़ा हूं॥ ७॥
हरि स्मरण कर भक्तजन संसार में प्रगट हुए हैं।
हरि स्मरण कर (ऋषियों ने) वेद उत्पन्न किए हैं।

हरि सिमरनि भए सिध जती दाते ॥
हरि सिमरनि नीच चहु कुंट जाते ॥
हरि सिमरनि धारी सभ धरना ॥
सिमरि सिमरि हरि कारन करना ॥
हरि सिमरनि कीओ सगल अकारा ॥
हरि सिमरन महि आपि निरंकारा ॥
करि किरपा जिसु आपि बुझाइआ ॥
नानक गुरमुखि हरि सिमरनु तिनि पाइआ ॥८॥ १ ॥

सलोकु

दीन दरद दुख भंजना घटि घटि नाथ अनाथ ॥

सरणि तुमारी आइओ नानक के प्रभ साथ ॥ १ ॥

असटपदी ॥

जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई ॥
जह महा भइआन दूत जम दलै ॥
तह केवल नामु संगि तेरै चलै ॥
जह मुसकल होवै अति भारी ॥
हरि को नामु खिन माहि उधारी ॥
अनिक पुनहचरन करत नही तरै ॥

हरि स्मरण कर सिद्ध यती और दाते हुए हैं।
हरि स्मरण कर नीच भी चारों ओर जाने जाते हैं।
सब सृष्टि हरिस्मरण के लिए बनाई गई है, अत एव
जीव उस हरि का स्मरण करे जो कारण करण है।
हरि स्मरण के लिए ही सब आकार किए है,
(क्योंकि हरि स्मरण में स्वयं निरंकार का वास है)।
प्रभु ने कृपा कर स्वयं जिस को समझ दी है, हे नानक! उसगुरमुख
भाव अधिकारी जन ने प्रभुस्मरण को प्राप्त किया है ॥८॥१॥

सलोकु

हे दीन जनों की मानसिक पीड़ा और शारीरक दुःख के नाशक !
हे सब घटों में पूर्ण ! हे अनाथों के नाथ। हे प्रभो !
श्री गुरु नानक देव जी के संग मिल कर मै आप की शरण में
आया हुं ॥ २ ॥

असटपदी

हे मन ! जहां माता पिता .पुत्र और भाई तेरी सहायता नहीं
करेंगे, वहां नाम तुम्हारे साथ सहाई होगा।
जहां भयंकर यमदूत पीटने वाले हैं, वहां केवल नाम ही
तुम्हारे संग जायगा।
जहां अति बड़ी कठिनाई होगी वहां पर हरिनाम क्षण में
उद्धार करेगा।
अनेक प्रायश्चित्त करने पर भी यह जीव नहीं तर सकेगा।

हरि को नामु कोटि पाप परहरै ॥
गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे ॥
नानक पावहु सूख घनेरे ॥ १ ॥
सगल सृसटि को राजा दुखीआ ॥
हरि का नामु जपत होइ सुखीआ ॥
लाख करोरी बंधु न परै ॥
हरि का नामु जपत निसतरै ॥
अनिक माइआ रंग तिख न बुझावै ॥
हरि का नामु जपत आघावै ॥
जिह मारगि इहु जात इकेला ॥
तह हरि नामु संगि होत सुहेला ॥
ऐसा नाम मन सदा धिआईऐ ॥
नानक गुरमुखि परम गति पाईऐ ॥ २ ॥
छूटत नही कोटि लख बाही ॥
नामु जपत तह पार पराही ॥
अनिक बिघन जह आइ संघारै ॥
हरि का नामु ततकाल उधारै ॥
अनिक जोनि जनमै मरि जाम ॥
नामु जपत पावै बिस्राम ॥
हउ मैला मलु कबहु न धोवै ॥

हरिनाम कोटिशः पापों को दूर करता है।
हे मेरे मन ! गुरू द्वारा नाम जप।
हे नानक ! तब तुम को अधिक सुख प्राप्त होंगे ॥ १ ॥
सारी सृष्टि का राजा दुःखी है।
हरिनाम जप कर वह सुखी होता है।
लाखों करोड़ों (संचय कर लेने) पर भी (तृष्णा) नहीं रुकती।
हरिनाम जप कर इस से बचाओ होता है।
माया के अनेक रंग तृष्णा को शान्त नहीं कर सकते,
(परन्तु) हरिनाम जप कर यह जीव तृप्त होता है।
जिस मार्ग में यह अकेला जाता है,
वहां सुखदाई हरिनाम संग होता है।
हे मन ! सर्वोत्तम नाम का सर्वदा ध्यान कर।
हे नानक ! तब गुरू द्वारा परमगति प्राप्त होगी ॥ २ ॥
जहां लाखों कोटि बन्धु-वर्गों के होते हुए भी यह जीव छूट
नहीं सकता, वहां नाम जप कर पार होता है।
जहां अनेक विघ्न आ कर संहार करते हैं,
वहां तत्काल ही हरिनाम उद्धार करता है।
अनेक योनियों में पड़ कर यह जीव जन्म मरण को प्राप्त होता है
नाम जप कर (सर्व दुःखों से) छूट जाता है।
अहंकाररूप मल से मलिन हुआ यह जीव अपनी मल को
उतार नहीं सकता।

हरि का नामु कोटि पाप खोवै ॥
ऐसा नामु जपहु मन रंगि ॥
नानक पाईऐ साध कै संगि ॥ ३ ॥

जिह मारग के गने जाहि न कोसा ॥
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा ॥
जिह पैडै महा अंध गुबारा ॥
हरि का नाम संगि उजिआरा ॥
जहा पंथि तेरा को ना सिञानू ॥
हरि का नामु तह नालि पछानू ॥
जह महा भइआन तपति बहु घाम ॥
तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम ॥
जहा तृखा मन तुझु आकरखै ॥
तह नानक हरि हरि अंमृतु बरखै ॥ ४ ॥

भगत जना की बरतनि नामु ॥
संत जना के मनि बिस्रामु ॥
हरि का नामु दास की ओट ॥
हरि कै नामि उधरे जन कोटि ॥
हरि जसु करत संत दिनु राति ॥
हरि हरि अउखधु साध कमाति ॥
हरि जन कै हरि नामु निधानु ॥

हरिनाम करोड़ों पापों को दूर करता है।

हे मन ! ऐसा नाम प्रेम पूर्वक जप।

हे नानक ! नाम साधु-संगति से प्राप्त होता है ॥ ३ ॥

जिस मार्ग के कोस संख्या में नहीं आते वहां हरिनाम तुम्हारे संग तोसा (यात्रा में खाने वाली वस्तु) है।

जिस मार्ग में अति अन्धे--गुबार है।

वहां हरिनाम संग ही उजाला है।

जिस मार्ग से तुम्हें कोई जानता नहीं है,

वहां हरिनाम ही तुम्हारा पहचान वाला है।

जहां महा भयंकर घाम की बहुत तप्त होगी,

वहां हरिनाम की तुम पर छाया होगी।

हे मन ! जहां तृष्णा तुझे सताती है,

हे नानक वहां हरिनाम से अमृत की वर्षा होती है ॥ ४ ॥

हरिभक्तों का धर्म और मर्य्यादा हरिनाम है।

सन्तजनों के मन में उस का विश्राम है।

हरिनाम हरि भक्तों का आधार है।

हरिनाम कर कोटिशः जनों का उद्धार होता है।

सन्त सदा हरियश करते हैं।

साधुजन हरिनाम औषधि को कमाते हैं।

हरि-भक्तों के पास हरिनाम का खज़ाना है।

पारब्रहमि जन कीनो दान ॥
मन तन रंगि रते रंग एकै ॥
नानक जन कै बिरति बिबेकै ॥ ५ ॥
हरि का नामु जन कउ मुकति जुगति ॥
हरि कै नामि जन कउ तृपति भुगति ॥
हरि का नामु जन का रूप रंगु ॥
हरि नामु जपत कब परै न भंगु ॥
हरि का नाम जन की वडिआई ॥
हरि कै नामि जन सोभा पाई ॥
हरि का नामु जन कउ भोगु जोग ॥
हरि नामु जपत कछु नाहि बिओग ॥
जनु राता हरि नाम की सेवा ॥
नानक पूजै हरि हरि देवा ॥ ६ ॥
हरि हरि जन कै माल खजीना ॥
हरि धनु जन कउ आपि प्रभि दीना ॥
हरि हरि जन कै ओट सताणी ॥
हरि प्रतापि जन अवर न जाणी ॥
ओति पोति जन हरि रसि राते ॥
सुंन समाधि नाम रस माते ॥
आठ पहर जनु हरि हरि जपै ॥
हरि का भगतु प्रगट नही छपै ॥

यह दान परमेश्वर ने स्वयं दासों को दिया है।

हरिभक्त मन और शरीर से एक प्रभु-रंग में रत्ते हैं।

हे नानक ! भक्तजनों की वृत्ति सर्वदा विचारवती है ॥५॥

हरिजनों के लिए हरिनाम ही मुक्ति-प्राप्ति की युक्ति है।

हरिनाम-भोजन से हरिजनों की तृप्ति है।

हरिनाम ही हरिजनों का रूप और रंग है।

हरिभक्तों को हरिनाम जपने में कभी भी विघ्न नहीं होता।

हरिनाम ही हरिजनों की बड़ाई है।

हरिनाम जप कर ही दासों ने यश प्राप्त किया है।

हरिनाम ही हरिभक्तों के लिए भोग्य और योग है।

हरिनाम जपकर हरिभक्तों को किसी वस्तु का वियोग नहीं होता—

हरिजन हरिनाम की सेवा में रत्ता है।

हे नानक ! वह हरिजन हरि हरि देव को पूजता है ॥६॥

हरिभक्तों के पास हरिनाम ही धन और खज़ाना है।

हरिजनों को हरिनाम-धन हरि ने स्वयं दिया है।

दासों के लिए हरिनाम ही शक्तिशाली आधार है।

हरिजन हरि-प्रताप के सम और कुछ नहीं जानते।

हरिभक्त ओत पोत हो कर हरि-रस में रत्ते हैं।

निर्विकल्प समाधि में आरूढ़ होकर नाम रस में मत्ते हैं।

दास आठों पहर हरिनाम को जपता है।

हरिभक्त संसार में प्रकट है, छिप नहीं सकता।

हरि की भगति मुकति बहु करे ॥
नानक जन संगि केते तरे ॥७॥

पारजातु इहु हरि को नाम ॥
कामधेन हरि हरि गुण गाम ॥
सभ ते ऊतम हरि की कथा ॥
नामु सुनत दरद दुख लथा ॥
नाम की महिमा संत रिद वसै ॥
संत प्रतापि दुरतु सभु नसै ॥
संत का संगु वडभागी पाईऐ ॥
संत की सेवा नामु धिआईऐ ॥
नामु तुलि कछु अवरु न होइ ॥
नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥८॥२॥

सलोकु

बहु सासत्र बहु सिमृती पेखे सरब ढढोलि ॥
पूजसि नाही हरि हरे नानक नाम अमोल ॥१॥

असटपदी

जाप ताप गिआन सभि धिआन ॥
खट सासत्र सिमृति वखिआन ॥
जोग अभिआस करम धरम किरिआ ॥
सगल तिआगि बन मधे फिरिआ ॥
अनिक प्रकार कीए बहु जतना ॥

हरिभक्ति ने बहुतों की मुक्ति की है।

हे नानक ! हरिभक्तों के संग बहुतों का उद्धार होता है।

हरि का नाम ही पारजात वृक्ष है।

हरि-गुण का गान करना ही कामधेनु है।

सर्वोत्तम हरि कथा है।

नाम-श्रवण से पीड़ा और दुःख दूर होता है।

नाम-महत्व का सन्त हृदय में वास है।

सन्त-प्रताप से सब पाप भाग जाते हैं।

सन्तों का संग बड़े भागों से प्राप्त होता है।

सन्त-सेवा से नाम का चिन्तन होता है।

नाम सम और कोई वस्तु नहीं है।

हे नानक ! गुरु द्वारा कोई बड़भागी जन ही नाम को पाता है।८।२।

सलोकु

अनेक शास्त्र और स्मृतियां हैं, सब को विचार कर देखा,

नानक ! हरिनाम तुल्य कोई भी नहीं है, नाम अमूल्य पदार्थ है।६

असटपदी ॥

जप तप ज्ञान और सब प्रकार का ध्यान,

छः शास्त्र और सब स्मृतियों का व्याख्यान,

योगाभ्यास, अनेक प्रकार के कर्म और धर्म-क्रिया,

सब वस्तु का त्याग कर बन में फिरे,

अनेक प्रकार के बहुत यत्न भी करे,

पुंनदान होमे बहु रतना ॥
सरीरु कटाइ होमै करि राती ॥
वरत नेम करै बहु भाती ॥
नही तुलि राम नाम बीचार ॥
नानक गुरमुखि नामु जपीऐ इक बार ॥१॥

नउखंड प्रिथमी फिरै चिरु जीवै ॥
महा उदासु तपीसरु थीवै ॥
अगनि माहि होमत परान ॥
कनिक अस्व हैवर भूमि दान ॥
निउली करम करे बहु आसन ॥
जैन मारग संजम अति साधन ॥
निमख निमख करि सरीर कटावै ॥
तउ भी हउमै मैलु न जावै ॥
हरि के नाम समसरि कछु नाहि ॥
नानक गुरमुखि नामु जपत गति पाहि ॥२॥
मन कामना तीरथ देह छुटै ॥
गरबु गुमानु न मन ते छुटै ॥
सोच करै दिनस अरु राति ॥
मन की मैलु न तन ते जाति ॥
इस देही कउ बहु साधना करै ॥

पुण्य दान और (रतना) घृत से हवन भी हवन करे,

शरीर कटा कर (राती) छोटे छोटे टुकड़ों से हवन करे,

बहुत प्रकार के व्रत और नेम भी करे,

परन्तु राम नाम के विचार सम कोई भी साधन नहीं है।

अतएव हे नानक ! (इकवार) मनुष्य जन्म में गुरू द्वारा केवल नाम ही जपिए ॥१॥

नव खंड पृथ्वी में फिरे और चिरञ्जीवी होवे,

महा उदासीन और तपीश्वर होवे,

अपने प्राणों को भी अग्नि में हवन करे,

स्वर्ण, अश्व और विशेष घोड़े पुनः पृथ्वी दान करे,

निवली कर्म और बहुत आसन करे,

अतिशय कर जैन मत के संयम और साधनों को करे,

(निमख) छोटे छोटे टुकड़े कर शरीर कटा देवे,

तो भी अहंता रूप मल दूर नहीं होती ॥

हरिनाम सम कोई साधन नहीं है।

हे नानक ! गुरू द्वारा जीव नाम कर मुक्ति पाते हैं ॥२॥

मानसिक इच्छा कर तीर्थ विशेष में शरीर को त्यागे, तो भी गर्व और गुमान मन से निवृत्त नहीं होता।

दिन रात स्नान करे।

तौ भी शारीरिक मन की मल निवृत्त नहीं होती।

इस शरीर कर बहुत प्रकार के साधन भी करे,

मन ते कबहु न बिखिआ टरै ॥
जलि धोवै बहु देह अनीति ॥
सुध कहा होइ काची भीति ॥
मन हरि के नाम की महिमा ऊच ॥
नानक नामि उधरे पतित बहु मूच ॥३॥
बहुतु सिआणप जम का भउ बिआपै ॥
अनिक जतन करि त्रिसन ना ध्रापै ॥
भेख अनेक अगनि नही बुझै ॥
कोटि उपाव दरगह नही सिझै ॥
छूटसि नाही ऊभ पइआल ॥
मोहि बिआपहि माइआ जालि
अवर करतूति सगली जमु डानै ॥
गोविंद भजन बिनु तिलु नही मानै ॥
हरि का नामु जपत दुखु जाई ॥
नानक बोलै सहजि सुभाइ ॥४॥
चारि पदारथ जे को मागै ॥
साध जना की सेवा लागै ॥
जे को अपुना दुखु मिटावै ॥
हरि हरि नामु रिदै सद गावै
जे को अपुनी सोभा लोरै ॥
साध संगि इह हउमै छोरै ॥

तौ भी मन से माया का प्रभाव दूर नहीं होता।
अनित्य शरीर को जल सग बहुत धोय, भाव स्नान करे,
तौ भी कच्चो दीवार कहाँ तक शुद्ध होय।
हे मन हरिनाम की महिमा बहुत ऊंची है।
हे नानक! बहुत बड़े पापी भी नाम से मुक्त हुए हैं॥३॥
बहुत चतुराइयों करके यम का भय व्याप्त है।
अनेक प्रयत्नों के करने पर भी तृष्णा शान्त नहीं होती।
अनेक वेषों कर तृष्णा रूप अग्नि शान्त नहीं होती।
क्रोड़ों उपावकरने पर भी परलोक में हिसाब से मुक्त नहीं होता।
आकाश और पाताल में जाकर भी मुक्त नहीं हो सकता,
क्योंकि मोह से माया का जाल वहाँ पर भी व्याप्त है।
और सब कर्म करने पर भी यम दंड देगा,
क्योंकि वह यम गोबिन्द भजन बिन रंचकमात्र भी नहीं मानता।
हे नानक! जो मनुष्य स्वभावतः हरिनाम उचारता है, उसका
दुःख हरिनाम जपने से दूर होता है॥४॥
जो धर्मादि चार पदार्थों को मांगे,
सो रंता में लगे
जो अपना दुःख दूर करना चाहे सो सदा हृदय से हरिनाम
उच्चारण करे।
जो अपनी कीर्ति चाहे,
साधु समाज में जाकर अहंता को त्यागे।

जे को जनम मरण ते डरै ॥
साध जना की सरनी परै ॥
जिसु जन कउ प्रभ दरस पिआसा ॥
नानक ता कै बलि बलि जासा ॥५॥
सगल पुरख महि पुरखु प्रधानु ॥
साध संगि जा का मिटै अभिमानु ॥
आपस कउ जो जाणै नीचा ॥
सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा ॥
जा का मनु होइ सगल की रीना ॥
हरि हरि नामु तिनि घटि घटि चीन्हा ॥
मन अपुने ते बुरा मिटाना ॥
पेखै सगल स्रिसटि साजना ॥
सूख दूख जन सम द्रिसटेता ॥
नानक पाप पुंन नही लेपा ॥६॥
निरधन कउ धनु तेरो नाउ ॥
निथावे कउ नाउ तेरा थाउ ॥
निमाने कउ प्रभ तेरो मानु ॥
सगल घटा कउ देवहु दानु ॥
करन करावनहार सुआमी ॥
सगल घटा के अंतरजामी ॥
अपनी गति मिति जानहु आपे ॥

जो जन्म और मरण से भय करे,

सो सन्त-शरण को ग्रहण करे।

जिस पुरुष को प्रभु-दर्शन की इच्छा है,

हे नानक ! मैं उस पर अपने आप को न्योछावर करता हूँ ॥७॥

सब पुरुषों में वह प्रधान है,

साधु संग कर जिस का अभिमान दूर हुआ है।

जो अपने आपको नीच जानता है,

उस को सब से ऊंचा गाणिये।

जिस का मन सब की धूलि होवे,

हरिनाम उस ने घट घट में चीना है।

जिस ने अपने मन से दुष्ट भाव मिटा दिया है,

उसने सब सृष्टि को अपना सज्जन देखा है।

वह पुरुष दुःख सुख को सम देखता है।

हे नानक ! उस को पुण्य और पाप का लेप नहीं है ॥८॥

तेरा नाम निर्धन का धन है।

तेरा नाम स्थान विहीन का स्थान है।

हे प्रभो ! तेरा नाम मान रहित का मान है।

सब जीवों को आप दान दे रहे हो।

हे स्वामी ! आप करने और कराने वाले हो।

आप सब जीवों के हृदय की जानने वाले हो।

अपनी गति और मर्य्यादा को आप ही जानते हो।

(२६

आपन संगि आपि प्रभ
तुमरी उसतति तुम ते हो
नानक अवरु न जानसि
सरब धरम महि स्रेसट
हरि को नामु जपि निरम
सकल क्रिआ महि ऊतम
साध संगि दुरमति मलु
सगल उदम महि उदमु
हरि का नामु जपहु जी
सगल बानी महि अंमृ
हरि को जसु सुनि रसन
सगल थान ते ओहु ऊत
नानक जिह घटि वसै ह
सल
निरगुनिआर इआनिआ
जिनि कीआ तिसु चीति

हे प्रभो ! अपने संग आप रच रहे हो।

तुमहारी स्तुति तुम से ही हो सकती है।

श्री सतगुरू जी कहते हैं कोई और नहीं जान सकता ॥७॥

सब धर्मों में श्रेष्ठ धर्म यह है कि

हरिनाम जप कर अपने कर्म को निर्मल करो।

सब क्रिया में उत्तम क्रिया यह है कि

साधु संग में मिलकर दुर्मति रूप मल को दूर करो।

सब उद्यमों में भला उद्यम यह है कि

अपने हृदय से सदा हरिनाम जपो।

सब वाणियों में हरियश की वाणी श्रेष्ठ है इसको सुनो और

रसना से उचारो।

हे नानक ! जिस घट में हरिनाम बसता है वह हृदय-स्थान

सब स्थानों में श्रेष्ठ है ॥८३॥

सलोकु

हे गुणहीन ! हे अजान ! उस प्रभु को सदा याद कर,

जिसने तुमको जन्म दिया है उस को हृदय में रख, हे नानक !

सो तुमहारा साथ देगा।

असटपदी

हे प्राणी ! परमेश्वर के गुणों को याद कर।

कैसे (तुच्छ) मूल से कैसी (सुन्दर देह बना कर) दिखाई है, भाव

माता पिता के मलिन रक्त-वीर्य से कैसी सुन्दर देह बनाई है।

जिनि तूं साजि सवारि सीगारिआ ॥
गरभ अगनि महि जिनहि उबारिआ ॥
बार बिवसथा तुझहि पिआरै दूध ॥
भरि जोबन भोजन सुख सूध ॥
बिरधि भइआ ऊपरि साक सैन ॥
मुखि अपिआउ बैठ कउ दैन ॥
इहु निरगुनु गुनु कछू न बूझै ॥
बखसि लेहु तउ नानक सीझै ॥१॥

जिह प्रसादि धर ऊपरि सुखि बसहि ॥
सुत भ्रात मीत बनिता संगि हसहि ॥
जिह प्रसादि पीवहि सीतल जला ॥
सुखदाई पवनु पावकु अमुला ॥
जिह प्रसादि भोगहि सभि रसा ॥
सगल समग्री संगि साथि बसा ॥
दीने हसत पाव करन नेत्र रसना ॥
तिसहि तिआगि अवर संगि रचना ॥
ऐसे दोख मूड़ अंध बिआपे ॥
नानक काढि लेहु प्रभ आपे ॥२॥

आदि अंति जो राखनहारु ॥

जिस ने तुम को अति सुन्दर बनाया और
गर्भाग्नि में बचाया,
बाल्यावस्था में तुम को दूध पिलाया,
जवानी में भोजन, सुख-मन्दिर दिये,
जब वृद्ध हुआ तो सेवा के लिये सम्बन्धी दिये,
जो बैठे बिठाए को मुख में भोजन देते हैं,
यह गुण-हीन जीव उस के उपकार को नहीं जानता ।
सतगुरु जी कहतेहैं—आप बखशिश करेंगे तब ही इस जीव का
उद्धार होगा ॥१॥
जिस की कृपा से पृथ्वी पर तूं सुख पूर्वक बसता है और
पुत्र भ्रता मित्र व स्त्री के संग हंसता है,
जिस की कृपा से तू शीतल जल पीता है,
पुनः सुखदायक वायु और अमूल्य अग्नि तुम को मिली है,
जिसकी कृपा से सब रसों को तू भोगता है,
पुनः सब पदार्थ तुम को मिले हैं,
जिस ने तुम को हाथ पांव कान नेत्र और जिह्वादि दिये हैं,
उस का त्याग कर के औरों के संग प्रीति लगाई है।
यह दोष मूढ़ अज्ञानियों को व्याप्ते हैं।
श्री गुरू जी कहते हैं, हे प्रभो ! तुम आप इन दोषों से जीव का
उद्धार करो ॥२॥
आदि से लेकर अंत तक भाव सर्वदा जो रक्षक है,

तिस सिउ प्रीति न करै गवारु ॥
जाकी सेवा नवनिधि पावै ॥
ता सिउ मूड़ा मनु नही लावै ॥
जो ठाकुर सद सदा हजूरे ॥
ता कउ अंधा जानत दूरे ॥
जा की टहल पावै दरगह मानु ॥
तिसहि बिसारै मुगधु अजानु ॥
सदा सदा इहु भूलन हारु ॥
नानक राखनहारु अपारु ॥ ३ ॥
रतनु तिआगि कउडी संगि रचै ॥
साचु छोडि झूठ संगि मचै ॥
जो छडना सु असथिरु करि मानै ॥
जो होवनु सो दूरि परानै ॥
छोडि जाइ तिस का स्रमु करै ॥
संगि सहाई तिसु परहरै ॥
चंदन लेपु उतारै धोइ ॥
गरधब प्रीति भसम संगि होइ ॥
अंधकूप महि पतित बिकराल ॥
नानक काढि लेहु प्रभ दइआल ॥४॥
करतूति पसू की मानस जाति ॥
लोक पचारा करै दिनु राति ॥

उस के संग मूढ़ प्रीति नहीं करता।
जिस की सेवा करने से नव निद्धि को पा सके,
उस के संग मूढ़ मन नहीं लगाता।
जो प्रतिपालक प्रभु हर समय मौजूद है,
उसको अज्ञानी दूर जानता है।
जिस की सेवा से जीव प्रभु-दर्बार में मान पाता है,
मूढ़ अज्ञानी उस को भुला देता है।
यह जीव सदा भूलने वाला है।
हे नानक ! परमात्मा अपार रक्षक है ॥३॥
नाप) रत्न को त्याग कर कौड़ी के संग रच रहा है।
सत्य को त्याग कर असत्य के संग गर्व करता है।
जिस को त्यागना है उस को स्थिर मान रहा है।
होने वाली बात भाव मरण को दूर समझ रहा है।
जिस माया को त्याग कर जाना है उसके निमित्त कष्ट उठाता है।
संग सहायक जो परमेश्वर है उस को त्याग देता है।
चन्दन के लेप को धोकर उतार रहा है।
गर्दभ की प्रीति राख के साथ ही होती है।
भयानक अन्ध कूप में यह जीव पड़ा है।
श्री गुरू जी कहते हैं हे दयालु प्रभो! उससे इसको निकाल लो ।४।
जीव का कर्तव्य तो पशु का है, जाति मनुष्य की है।
दिन रात लोक-प्रसन्नता के लिए दम्भ करता है।

बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥

छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥
बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥
अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥
अंतरि अगनि बाहरि तनु सुआह ॥

गलि पाथर कैसे तरै अथाह ॥

जा कै अंतरि बसै प्रभु आपि ॥
नानक ते जन सहजि समाति ॥ ५ ॥
सुनि अंधा कैसे मारगु पावै ॥
करु गहि लेहु ओड़ि निबहावै ॥
कहा बुझारति बूझै डोरा ॥
निसि कहीऐ तउ समझै भोरा ॥
कहा बिसनपद गावै गुंग ॥
जतन करै तउ भी सुर भंग ॥
कह पिंगुल परबत परभवन ॥
नही होत ऊहा उसु गवन ॥
करतार करुणामै दीनु बेनती करै ॥
नानक तुमरी किरपा तरै ॥ ६ ॥

दिखावे के लिए (धर्म) वेष बनाया है परन्तु हृदय में माया
की मल भरी है।
छिपाने के यत्न करने पर भी वह कपट छिप नहीं सकता।
बाहर से ज्ञान की बातें, ध्यान और स्नान के कर्म करता है,
हृदय में लोभ रूप श्वान जोर पकड़ रहा है।
मन में तृष्णा रूप अग्नि ल ी है और बाहर शरीर पर राखी
लगाई है।
गले में (कपट का) पत्थर बन्धा है अतएव अथाह समुद्र को
कैसे तरे ?
जिन के मन में स्वयं प्रभु बसता है,
हे नानक ! वह सहज अवस्था को प्रा त हैं ५।
अन्धा सुन अर कैसे मार्ग प्राप्त करे ?
हे प्रभो ! हाथ पकड़ कर अन्त पर्यन्त निबाहो।
बहरा किस प्रकार बुझारत को समझे ?
कहियेगा रात्रि, समझेगा दिन।
गूंगा भजन कैसे गा सकता है ?
प्रयत्न करने पर भी उस का स्वर भं ा होगा।
पिंगुला पर्वत पर कैसे घूम सकता है ?
उसका उस पर जाना ही नहीं हो सकता।
हे कर्तार ! हे करुणामय ! यह दीन विनती करता है।
श्री गुरु जी कहते हैं, यह जी ा आपकी कृ ा से तर सकता है।६।

संगि सहाई सु आवै न चीति ॥
जो बैराई ता सिउ प्रीति ॥
बलूआ के गृह भीतरि बसै ॥
अनद केल माइया रंगि रसै ॥
दृड़ु करि मानै मनहि परतीति ॥

कालु न आवै मूड़े चीति ।
बैर बिरोध काम क्रोध मोह ॥
झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह ॥
इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥
नानक राखि लेहु आपन करि करम ॥७॥
तू ठाकुरु तुम पहि अरदासि ॥
जीउ पिंडु सभु तेरी रासि ॥
तुम मात पिता हम बारिक तेरे ।
तुमरी क्रिपा महि सूख घनेरे ॥
कोइ न जानै तुमरा अंतु ॥
ऊचे ते ऊचा भगवंत ॥
सगल समग्री तुमरै सूत्रि धारी ॥
तुम ते होइ सु आगिआकारी ॥
तुमरी गति मिति तुम ही जानी ॥
नानक दास सदा कुरबानी ॥ ८ ॥ ४ ॥

जो हरि संग में है और सहायक है वह तो याद नहीं आता,
जो शत्रु है उसके संग प्रीति है।
(जीव) रेत के घर में बसता है,
(परन्तु) मायक रंग में खचित हुआ आनन्द और क्रीड़ा करता है।
(उस रेत के घर रूपी शरीर को) सदा स्थिर समझता है और
मन में इस से प्रीति करता है।

मूर्ख को मौत याद नहीं आती।
वैर विरोध, काम क्रोध, मोह,
झूठ, विकार, बहुत लोभ और विश्वास-घातादि
बुराईयों में लग कर कई जन्म व्यतीत हो गये।
श्री गुरू जी कहते हैं, अब अपनी कृपा कर रक्षा करो ॥ ७ ॥
तू प्रतिपालक प्रभु हैं, तुम्हारे पास विनती है।
जीव और शरीर सब तेरी पूंजी है।
तुम माता और पिता हो, हम तुम्हारे बालक हैं।
तुम्हारी कृपा में हम को अधिक सुख हैं।
तुम्हारा अन्त कोई नहीं जानता।
हे भगवन्त ! तू ऊंचों से ऊंचा है।
सब रचना तुम्हारी मर्य्यादा में खड़ी है।
तुम्हारा किया हुआ (जीव) तुम्हारी आज्ञा में चलता है।
तुम अपनी गति और मर्य्यादा को आप ही जानते हो।
श्री जगत गुरू जी कहते हैं, दास सदा आप पर कुर्बान है ॥८॥

सलोकु

देनहारु प्रभ छोडि कै लागहि आन सुआइ ॥
नानक कहू न सीझई बिनु नावै पति जाइ ॥ १ ॥

असटपदी

दस बसतू ले पाछै पावै ॥
एक बसतु कारनि बिखोटि गवावै ॥
एक भी न देइ दस भी हिरि लेइ ॥
तउ मूड़ा कहु कहा करेइ ॥
जिसु ठाकुर सिउ नाही चारा ॥
ता कउ कीजै सद नमसकारा ॥
जा कै मनि लागा प्रभु मीठा ॥
सरब सूख ताहू मनि वूठा ॥
जिसु जन अपना हुकमु मनाइआ ॥
सरब थोक नानक तिनि पाइआ ॥ १ ॥
अगनत साहु अपनी दे रासि ॥
खात पीत बरतै अनद उलासि ॥
अपुनी अमान कछु बहुरि साहु लेइ ॥
अगिआनी मनि रोसु करेइ ॥
अपनी परतीति आप ही खोवै ॥

सलोकु

दातार प्रभु का त्याग करके यह जीव और स्वार्थों में लग रहे हैं।
हे नानक ! वह पुरुष कही मुक्ति नहीं पाते, क्योंकि नाम बिना
मान नहीं होता ॥६॥

असटपदी

दश (भाव,कई) पदार्थ लेकर जमा करता है;

एक वस्तु के न होने के कारण अपना विश्वास गंवा लेता है।

(भला) प्रभु उस एक वस्तु को न देकर प्रथम की दी हुई वस्तु
को भी छीन ले,
तब बताओ यह मूर्ख जीव क्या कर सकता है ?
जिस स्वामी के संग वस न चले,
उस को सदा नमस्कार करिये।
जिस के मन में प्रभु प्यारा लगता है,
सब सुख उस के मन में प्राप्त होते हैं।
जिस मनुष्य को (प्रभु ने) अपना हुकम मनाया है,
उसने सब पदार्थ पा लिये हैं ॥१॥
अनन्त पदार्थों का धनी प्रभु अपनी पूंजी देता है।
(जीव) उसकी दात को खाता पीता वर्तता अति प्रसन्न होता है।
जब शाह (प्रभु) अपनी अमानत कुछ वापिस ले लेता है,
तब अज्ञानी अपने मन में क्रोध करता है।
(ऐसा करने से जीव) अपना विश्वास आप खो लेता है।

वहुरि उसका बिस्वासु न होवै ॥
जिस की वसतु तिसु आगै राखै ॥
प्रभ की आगिआ मानै माथै ॥
उस ते चउगुन करै निहालु ॥
नानक साहिबु सदा दइआलु ॥ २ ॥
अनिक भाति माइआ के हेत ॥
सरपर होवत जानु अनेत ॥
बिरख की छाइआ सिउ रंगु लावै ॥
ओह बिनसै उहु मनि पछुतावै ॥
जो दीसै सो चालनहारु ॥
लपटि रहिओ तह अंध अंधारु ॥
बटाऊ सिउ जो लावै नेह ॥
ता कउ हाथि न आवै केह ॥
मन हरि के नाम की प्रीति सुखदाई ॥
करि किरपा नानक आपि लए लाई ॥३॥

मिथिआ तनु धनु कुटंबु सबाइआ ॥
मिथिआ हउमै ममता माइआ ॥
मिथिआ राज जोबन धन माल ॥
मिथिआ काम क्रोध बिकराल ॥
मिथिआ रथ हसती अस्व बस्त्रा ॥

फिर उसका विश्वास नहीं किया जाता।

जिस (प्रभु) की वस्तु है उसके आगे धरे और

प्रभु-आज्ञा को माथे पर माने,

तब शाह उसको उस से चार गुणा अधिक प्रसन्न करता है।

हे नानक ! वह साहिब सर्वदा दयालु है ॥२॥

माया के जो अनेक प्रकार के हित हैं,

निश्चय जान कि वह नाश होंगे।

जैसे किसी ने वृक्ष की छाया संग प्रीति लगाई है,

उस के नाश होने पर वह पश्चात्ताप करता है।

इस प्रकार जो कुछ दिखाई देता है वह सब नाश होने वाला है।

यह अन्धा उन में लपट रहा है।

जो (जीव) यात्रु संग प्रीति करता है,

उस के हाथ में कुछ नहीं आता।

हे मन ! हरि के नाम की प्रीति सुखदायक है।

हे नानक ! (अकाल पुरुष) कृपा करके आप ही अपनी प्रीति
लगा देता है ॥३॥

तन धन और सब परिवार मिथ्या है।

"मैं ," "यह मेरा है" और माया—यह सब मिथ्या है।

राज यौवन धन और माल—यह सब मिथ्या हैं।

भयंकर काम और क्रोध मिथ्या हैं।

रथ हस्ती घोड़े और वस्त्र—यह सब मिथ्या है।

मिथिआ रंग संगि माइआ पेखि हराता ॥
मिथिआ ध्रोह मोह अभिमानु ॥
मिथिआ आपस ऊपरि करत गुमानु ॥
असथिरु भगति साध की सरन ॥
नानक जपि जपि जीवै हरि के चरन ॥४॥
मिथिआ स्रवन पर निंदा सुनहि ॥
मिथिआ हसत पर दरब कउ हिरहि ॥
मिथिआ नेत्र पेखत पर त्रिअ रूपाद ॥
मिथिआ रसना भोजन अन स्वाद ॥

मिथिआ चरन पर बिकार कउ धावहि ॥
मिथिआ मन पर लोभु लुभावहि ॥
मिथिआ तन नही पर उपकारा ॥
मिथिआ बासु लेत बिकारा ॥
बिनु बूझे मिथिआ सभ भए ॥
सफल देह नानक हरि हरि नाम लए ॥५॥
बिरथी साकत की आरजा ॥
साच बिना कह होवत सूचा ॥
बिरथा नाम बिना तनु अंध ॥
मुखि आवत ता कै दुरगंध ॥
बिनु सिमरन दिनु रैनि बृथा बिहाइ ॥

प्रसन्नता पूर्वक माया को देख कर हँसना भी मिथ्या है।

द्रोह, मोह, अहंकार सब झूठा है।

अपने ऊपर गुमान करना भी झूठा है।

साधु शरण और हरि-भक्ति यह स्थिर है।

हे नानक ! वह (जीव) जीवित है जो हरि-चरण जपता है ॥४॥

व्यर्थ हैं कान जो दूसरे की निन्दा सुनते हैं।

व्यर्थ हैं हाथ जो दूसरों का धन चुराते हैं।

व्यर्थ हैं नेत्र जो देखते हैं पर स्त्रियों के रूपादि।

व्यर्थ है जिह्वा जो (हरि रस त्याग के) भोजनादि और स्वादों
में लगी रहती है।

व्यर्थ हैं चरण जो दूसरे की बुराई निमित्त दौड़ते हैं।

व्यर्थ है वह मन जो पर-पदार्थों के लोभ में लुभा रहे है।

व्यर्थ है शरीर जो परोपकार में तत्पर नहीं है।

व्यर्थ हैं (घ्राण) जो विकार जनक वासना को लेते हैं।

बिना समझे सब (जीव) व्यर्थ चले गये।

हे नानक ! केवल हरिनाम उच्चारण में शरीर सफल होता है ॥५॥

व्यर्थ है दुर्जन की सब अवस्था, क्योंकि

सत्य बिना कभी कोई सच्चा नहीं हो सकता है।

नाम बिना अज्ञानी का शरीर व्यर्थ है।

उसके मुख से (झूठ निन्दादि की) दुर्गन्धि आती है।

स्मरण बिना दिन रात व्यर्थ व्यतीत होते हैं,

मेघ बिना जिउ खेती जाइ ॥
गोबिंद भजन बिनु ब्रिथे सभ काम ॥
जिउ किरपन के निरारथ दाम ॥
धंनि धंनि ते जन जिह घटि बसिओ हरि नाउ ॥
नानक ता कै बलि बलि जाउ ॥ ६ ॥
रहत अवर कछु अवर कमावत ॥

मनि नही प्रीति मुखहु गंढ लावत ॥
जाननहार प्रभू परबीन ॥
बाहरि भेख न काहू भीन ॥
अवर उपदेसै आपि न करै ॥
आवत जावत जनमै मरै ॥
जिस कै अंतरि बसै निरंकारु ॥
तिस की सीख तरै संसारु ॥
जो तुम भाने तिन प्रभु जाता ॥
नानक उन जन चरन पराता ॥७॥
करउ बेनती पारब्रहमु सभु जानै ॥
अपना कीआ आपहि मानै ॥
आपहि आप आपि करत निबेरा ॥
किसै दूरि जनावत किसै बुझावत नेरा ॥

जैसे बादल व   ।

गोविन्द भजन बिना सब काम व्यर्थ है,

जैसे कंजूस का धन व्यर्थ है।

वह पुरुष धन्य हैं जिनके मन में हरिनाम बसा है।

श्री गुरू जी कहते हैं हम उन पर बलिहार बलिहार जाते हैं।६।

बाहर की रहनी (भाव, दिखावा) और है पुनः करता कछु और है।

मन में तो प्रीति नहीं और मुख से प्रीति के बनाव बनाता है।

अन्तर्यामी, सब कुछ पहिचानने वाला,

बाहर के किसी कपट वेष कर प्रभु रीझता नहीं।

जो दूसरे को उपदेश देता है और आप कमाता नहीं,

वह सदा जन्म मरण के चक्र में पड़ा रहता है।

जिसके मन में निरंकार बसता है।

उस की शिक्षा से संसार तरता है।

हे प्रभो! जो तुमको भाते हैं उन्होंने तुमको जाना है।

श्री गुरू जी कहते हैं हम उनके चरणों पर पड़ते हैं॥७॥

प्रभु के सम्मुख मैं जो बिनती करता हूँ वह सब कुछ जानता है।

अपने किये भक्त को आप ही मान देता है।

आप ही अपने आप न्याय करता है।

किसी को दूर जनाता है, किसी को अपना आप समीप दिखाता है।

उपाव सिआनप सगल ते रहत ॥
सन्तु कछु जानै आतम की रहत ॥
जिसु भावै तिसु लए लड़ि लाइ ॥
थान थनंतरि रहिआ समाइ ॥
सो सेवकु जिसु किरपा करी ॥
निमख निमख जपि नानक हरि ॥ ८ ॥ ५ ॥

सलोकु

काम क्रोध अरु लोभ मोह बिनसि जाइ अहंमेव ॥
नानक प्रभ सरणागती करि प्रसादु गुरदेव ॥ १ ॥

असटपदी

जिह प्रसादि छतीह अंमृत खाहि ॥
तिसु ठाकुर कउ रखु मन माहि ॥
जिह प्रसादि सुगंधत तनि लावहि ॥
तिस कउ सिमरत परम गति पावहि ॥
जिह प्रसादि बसहि सुख मंदरि ॥
तिसहि धिआइ सदा मन अंदरि ॥
जिह प्रसादि गृह संगि सुख बसना ॥
आठ पहर सिमरहु तिसु रसना ॥
जिह प्रसादि रंग रस भोग ॥
नानक सदा धिआईऐ धिआवनजोग ॥१॥

किसी उपाव व स्यानप से वश में नहीं आता,
क्योंकि वह हर एक जीव की आत्मिक रहनी को जनता है।
जिस को चाहता है उस को अपनी शरण में लगा लेता है।
वह हर एक स्थान में समा रहा है।
वह ही सेवक है जिस पर प्रभु ने स्वयं कृपा की है।
वह सेवक पल पल हरि को जपता है ॥८॥ ॥५॥

सलोकु

श्री गुरु जी कहते हैं, हे प्रभो ! मैं आपकी शरण हूँ हे गुरु देव ! कृपा कर, जिस से काम, क्रोध, लोभ, मोह, और अहंकार नष्ट हो जायं ॥१॥

असटपदी

जिसकी कृपा से तू छत्तीस प्रकार के उत्तम भोजन को खाता है,
उस परमेश्वर को मन में धारण कर।
जिस की कृपा से सुगंधियां शरीर पर लगाता है।
उस का स्मरण करने से परम गति को पायेगा।
जिस की कृपा से सुख पूर्वक मन्दिर में बसता है,
सदा मन में उसका ध्यान कर।
जिस की कृपा से घर में सुख से बसता है।
आठ पहर जिह्वा से उसका स्मरण कर।
जिस की कृपा से रंग और रस तू भोगता है।
हे नानक ! उस ध्यान योग्य का सदा ध्यान कर ॥१॥

जिह प्रसादि पाट पटंबर हढावहि ॥
तिसहि तिआगि कत अवर लुभावहि ॥
जिह प्रसादि सुखि सेज सोईजै ॥
मन आठ पहर ता का जसु गावीजै ॥
जिह प्रसादि तुझु सभु कोऊ मानै ॥
सुखि ता को जसु रसन बखानै ॥
जिह प्रसादि तेरा रहता धरमु ॥
मन सदा धिआइ केवल पारब्रहमु ॥
प्रभ जी जपत दरगह मानु पावहि ॥
नानक पति सेती घरि जावहि ॥ २ ॥
जिह प्रसादि आरोग कंचन देही ॥
लिव लावहु तिसु राम सनेही ॥
जिह प्रसादि तेरा ओला रहत ॥
मन सुख पावहि हरि हरि जसु कहत ॥
जिह प्रसादि तेरे सगल छिद्र ढाके ॥
मन सरनी परु ठाकुर प्रभ ता कै ॥
जिह प्रसादि तुझु को न पहूचै ॥
मन सासि सासि सिमरहु प्रभ ऊचे ॥
जिह प्रसादि पाई दुर्लभ देह ॥
नानक ता की भगति करेह ॥ ३ ॥
जिह प्रसादि आभूखन पहिरीजै ॥

जिस की कृपा से तू साधारण और रेशमी वस्त्रों को पहनता है,
उसका त्याग कर क्यों दूसरी वस्तुओं में लुभा रहा है ?
जिस की कृपा से तूं सुख पूर्वक सेजा पर सोता है,
हे मन ! आठों पहर उसका सुयश गाओ ।
जिसकी कृपा से तुम को सब कोई मानता है,
मुख से जिह्वा द्वारा उसका सुयश कथन कर ।
जिस की कृपा से तुम्हारा धर्म बना रहता है,
हे मन ! सदा केवल उस पारब्रह्म का ध्यान कर ।
प्रभु जप कर तू प्रभु-दर्बार में मान पायेगा ।
हे नानक ! तूं मान के संग अपने घर जायेगा ॥२॥
जिसकी कृपा से स्वर्ण सम सुन्दर और रोग-रहित तेरा शरीर है,
उस परमेश्वर में अपनी चित्त-वृत्ति को लगा ।
जिस की कृपा से तेरा परदा बना है,
हे मन ! उस हरियश के करने से तू सुख पायेगा ।
जिसकी कृपा से तेरे सब दोष ढके हैं,
हे मन ! उस प्रभु-ठाकुर की शरण में पड़ ।
जिस की कृपा से कोई तुम्हारी समता नहीं कर सकता,
हे मन ! उस ऊंचे प्रभु का श्वास श्वास समरण कर ।
जिस की कृपा से तुम ने दुर्लभ शरीर पाया है,
हे नानक ! उसकी भक्ति कर ॥३॥
जिसकी कृपा से (कई प्रकार के) भूषण पहने जाते हैं,

मन तिसु सिमरत किउ आलसु कीजै ॥
जिह प्रसादि अस्व हसति असवारी ॥
मन तिसु प्रभ कउ कबहू न बिसारी ॥
जिह प्रसादि बाग मिलख धना ॥
राखु परोई प्रभु अपुने मना ॥
जिनि तेरी मन बनत बनाई ॥
ऊठत बैठत सद तिसहि धिआई ॥
तिसहि धिआइ जो एकु अलखै ॥
ईहा ऊहा नानक तेरी रखै ॥ ४ ॥
जिह प्रसादि करहि पुंन बहु दान ॥
मन आठ पहर करि तिस का धिआ ॥
जिह प्रसादि तू आचार बिउहारी ॥
तिस प्रभ कउ सासि सासि चितारी
जिह प्रसादि तेरा सुंदर रूपु ॥
सो प्रभु सिमरहु सदा अनूपु ॥
जिह प्रसादि तेरी नीकी जाति ॥
सो प्रभु सिमरि सदा दिन राति ॥
जिह प्रसादि तेरी पति रहै ॥
गुर प्रसादि नानक जसु कहै ॥ ५ ॥
जिह प्रसादि सुनहि करन नाद ॥
जिह प्रसादि पेखहि बिसमाद ॥

हे मन ! उस के स्मरण में आलस क्यों किया जाय ?
जिस की कृपा से तूं घोड़े और हाथियों की सवारी करता है,
हे मन ! उस प्रभु को मत भूलना।
जिस की कृपा से तुम को बगीचे मन्दिर और धन प्राप्त है,
भु को अपने मन में परो कर रक्ख।
हे मन ! जिस ने तुमहारा सब बनाउ बनाया है,
उठते बैठते सदा उसका ध्यान कर।
हे नानक ! उसका ध्यान धर जो एक और अलक्ख है,
और जो लोक और परलोक में तुमहारा मान रखेगा ॥४॥
जिसकी कृपा से तूं पुण्य और दान करता है,
हे मन ! सदा उस का ध्यान कर।
जिसकी कृपा से तूं शुभ-कार्य्य करने वाला व्यवहारी है,
उस प्रभु को स्वास स्वास याद कर।
जिसकी कृपा से तेरा सुन्दर रूप है,
उस अनूपम प्रभु का सदा स्मरण कर।
जिसकी कृपा से तेरी उत्तम जाति है,
उस प्रभु का सदा दिन रात स्मरण कर।
जिस की कृपा से तेरा मान बना है,
गुरु-कृपा से हे नानक ! हम उस का यश कहते हैं ॥५॥
जिसकी कृपा से कानों से तूं रागादिकों को सुनता है,
जिसकी कृपा से आश्चर्य वस्तुओं को देखता है,

जिह प्रसादि बोलहि अंमृत रसना ॥
जिह प्रसादि सुखि सहजे बसना ॥
जिह प्रसादि हसत कर चलहि ॥
जिह प्रसादि संपूरन फलहि ॥
जिह प्रसादि परम गति पावहि ॥
जिह प्रसादि सुखि सहजि समावहि ॥
ऐसा प्रभु तिआगि अवर कत लागहु ॥
गुर प्रसादि नानक मनि जागहु ॥ ६ ॥
जिह प्रसादि तूं प्रगटु संसारि ॥
तिसु प्रभ कउ मूलि न मनहु बिसारि ॥
जिह प्रसादि तेरा प्रतापु ॥
रे मन मूड़ तू ता कउ जापु ॥
जिह प्रसादि तेरे कारज पूरे ॥
तिसहि जानु मन सदा हजूरे ॥
जिह प्रसादि तूं पावहि साचु ।
रे मन मेरे तूं ता सिउ राचु ॥
जिह प्रसादि सभ की गति होई ॥
नानक जापु जपै जपु सोई ॥ ७ ॥
आपि जपाए जपै सो नाउ ॥
आपि गावाए सु हरि गुन गाउ ॥
प्रभ किरपा ते होय प्रगासु ॥

जिस की कृपा से रसना द्वारा तूं अमृत बचन बोलता है,
जिस की कृपा से तूं स्वाभाविक सुख में बस रहा है,
जिस की कृपा से तेरे हाथ चलते हैं,
जिस की कृपा से तूं संपूर्ण फलों से फला है,
जिस की कृपा से परम गति को पाता है,
जिस की कृपा से आत्म सुख में समाता है,
ऐसा प्रभु त्याग के तूं और किस में लगा है ?
हे नानक ! गुरु-कृपा से मन में जागो ॥६॥
जिस की कृपा से तूं संसार में प्रगट है,
उस प्रभु को मन से कभी न भूल ।
जिस की कृपा से तेरा प्रताप बना है,
हे मूढ़ मन ! तूं उस को जप ।
जिस की कृपा से तेरे कार्य्य पूर्ण हो रहे हैं,
हे मन ! उसको सदा प्रत्यक्ष जान ।
जिस की कृपा से तू सत्य-रूप प्रभु को पाता है,
हे मेरे मन ! तूं उस के संग प्रीति कर ।
जिस की कृपा से सब की गति होती है,
हे नानक ! उस जपने योग्य को जप ॥७॥
जिस को प्रभु आप जपाय, सो नाम जपता है ।
जिस से आप गान कराता है, सो हरि-गुण गाता है ।
प्रभु-कृपा से प्रकाश होता है ।

प्रभ दइआ ते कमल बिगासु ॥
प्रभ सुप्रसंन वसे मन सोइ ॥
प्रभ दइआ ते मति ऊतम होइ ॥
सरब निधान प्रभ तेरी मइआ ॥
आपहु कछू न किनहू लइआ ॥
जितु जितु लावहु तितु लगहि हरि नाथ ॥
नानक इन कै कछू न हाथ ॥ ८ ॥ ६ ॥

सलोकु ॥

अगम अगाधि पारब्रहमु सोइ ॥
जो जो कहै सु मुकता होइ ॥
सुनि मीता नानकु बिनवंता ॥
साध जना की अचरज कथा ॥ १ ॥

असटपदी

साध कै संगि मुख ऊजल होत ॥
साध संगि मलु सगली खोत ॥
साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥
साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ॥
साध कै संगि बुझै प्रभु नेरा ॥
साध कै संगि सभु होत निबेरा ॥
साध कै संगि पाए नाम रतनु ॥

प्रभु-दया से हृदय-कमल प्रफुल्लित होता है।

जब प्रभु प्रसन्न होता है तब मन में बसता है।

प्रभु-दया से उत्तम बुद्धि होती है।

हे प्रभो! तेरी कृपा सब सिद्धों की सिद्धि है।

अपने आप किसी ने कुछ नहीं लिया,

हे हरिनाथ! जहां जहां जीवों को लगाते हो वहां वहां वह लगते हैं।

हे नानक! इन जीवों के हाथ में कुछ नहीं है ॥८॥६॥

सलोकु

सो पारब्रह्म गम्यता रहित और अथाह है।

जो जो पुरुष प्रभु नाम को लेता है सो सो मुक्त होता है।

श्री गुरु जी बिनती करते हैं, हे मित्र! सुन (उस का नाम स्मरण करने वाले) महापुरुषों की कथा आश्चर्य है ॥७॥

असटपदी ॥

साधु संगति से मुख उज्जल होता है।

साधु संगति सब मल को दूर करती है।

साधु संगति से अभिमान दूर होता है।

साधु संगति से श्रेष्ट ज्ञान प्रकट होता है।

साधु संगति से प्रभु समीप जाना जाता है।

साधु संगति से सब (बन्धनों) से खलासी हो जाती है।

साधु संगति से जीव नाम रत्न को पाता है।

साध कै संगि एक ऊपरि जतनु ॥
साध की महिमा बरनै कउनु प्रानी ॥
नानक साध की सोभा प्रभ माहि समानी ॥ १ ॥
साध कै संगि अगोचरु मिलै ॥
साध कै संगि सदा परफुलै ॥
साध कै संगि आवहि वसि पंचा ॥
साध संगि अंमृत रसु भुंचा ॥
साध संगि होइ सभ की रेन ॥
साध कै संगि मनोहरि बैन ॥
साध कै संगि न कतहूं धावै ॥
साध संगि असथिति मनु पावै ॥
साध कै संगि माइआ ते भिंन ॥
साध संगि नानक प्रभ सुप्रसंन ॥ २ ॥
साध संगि दुसमन सभि मीत ॥
साधू कै संगि महा पुनीत ॥
साध संगि किस सिउ नही बैरु ॥
साध कै संगि न बीगा पैरु ॥
साध कै संगि नाही को मंदा ॥
साध संगि जाने परमानंदा ॥
साध कै संगि नही हउ तापु ॥
साध कै संगि तजै सभु आपु ॥

साधु संगति से एक परमेश्वर प्राप्ति का ही यत्न होता है।
साधु महिमा को कौन प्राणी वर्णन कर सकता है ?
हे नानक ! साधु महिमा प्रभु में समाई हुई है ॥१॥
साधु संगित से इन्द्रियों-का-अविषय प्रभु मिलता है।
साधु संगति से मन सर्वदा प्रफुल्लित रहता है।
साधु संगति से पांचों (कामादि) बस में आते हैं।
साधु संगति से जीव अमृत रस का आस्वादन करता है।
साधु संगति से जीव सब की धूली होता है।
साधु संगति से मधुर वचन बोलता है।
साधु संगति से (वासना अधीन होकर) कहीं दौड़ता नहीं।
साधु संगति से मन स्थिरता को प्राप्त होता है।
साधु संगति से माया में अलेप रहता है।
हे नानक ! साधु संगति करने से प्रभु सुप्रसन्न होता है ॥२॥
साधु संगति से सब शत्रु मित्र हो जाते हैं।
साधु संगति से मन अति पवित्र होता है।
साधु संगति से किसी के संग वैर नहीं रहता।
साधु संगति से कुमार्ग में पाओं नहीं पड़ता।
साधु संगति से कोई बुरा दिखाई नहीं पड़ता।
साधु संगति से जीव परमानन्द को जानता है।
साधु संगति से अहंता रूप ताप नहीं होता।
साधु संगति से जीव सब आपा भाव त्याग देता है।

आप जानै साध वडाई ॥
नानक साध प्रभू वनि आई ॥ ३ ॥
साध कै संगि न कबहू धावै ॥
साध कै संगि सदा सुखु पावै ॥
साध संगि वसतु अगोचर लहै ॥
साध कै संगि अजरु सहै ॥
साध कै संगि बसै थानि ऊचै ॥
साधू कै संगि महलि पहूचै ॥
साध कै संगि दड़ै सभि धरम ॥
साध कै संगि केवल पारब्रहम ॥
साध कै संगि पाए नाम निधान ॥
नानक साधू कै कुरबान ॥ ४ ॥
साध कै संगि सभ कुल उधारै ॥
साध संगि साजन मीत कुटंब निसतारै ॥
साधू कै संगि सो धनु पावै ॥
जिसु धन ते सभु को वरसावै ॥
साध संगि धरम राइ करे सेवा ॥
साध कै संगि सोभा सुर देवा ॥
साधू कै संगि पाप पलाइन ॥
साध संगि अंमृत गुन गाइन ॥
साध कै संगि सब्र थान गंमि ॥

प्रभु-साधु की बड़ाई को स्वयं जानता है।
हे नानक ! साधु की प्रभु संग बन आई है ॥३॥
साधु संगति से मन कभी भी नहीं दौड़ता।
साधु संगति से नित्य सुख को पाता है।
साधु संगति से अगोचर वस्तु को पा लेता है।
साधु संगति से असहय्य वस्तु का सहन करता है।
साधु संगति से ऊंचे स्थान पर बसता है।
साधु संगति से आत्म स्वरूप में प्राप्त होता है।
साधु संगति से सब धर्म को दृढ़ कर लेता है।
साधु संगति से (सब जगह) केवल पारब्रह्म को देखता है।
साधु संगति से नाम रूप निद्धि को पाता है।
श्री गुरु जी कहते हैं, हम साधु पर कुर्बान जाते हैं ॥४॥
साधु संगति से जीव समूह कुल का उद्धार कर लेता है।
साधु संगति से सज्जन मित्र और परिवार को तारता है।
साधु संगति से उस नाम रूप धन को पाता है।
जिस धन से हर इक जीव तृप्त होता है।
साधु संगति से धर्मराज भी सेवा करता है।
साधु संगति से इन्द्र भी बड़ाई करता है।
साधु संगति से पाप भाग जाते हैं।
साधु संगति से अमृत गुण का गान करता है।
साधु संगति से सब स्थानों में गम्यता होती है।

नानक साध कै संगि सफल जनंम ॥ ५ ॥
साध कै संगि नहीं कछु घाल ॥

दरसनु भेटत होत निहाल ॥
साध कै संगि कलूखत हरै ॥
साध कै संगि नरक परहरै ॥
साध कै संगि ईहा ऊहा सुहेला ॥
साध संगि बिछुरत हरि मेला ॥

जो इछै सोई फलु पावै ॥
साध कै संगि न बिरथा जावै ॥
पारब्रहमु साध रिद बसै ॥
नानक उधरै साध सुनि रसै ॥ ६ ॥

साध कै संगि सुनउ हरि नाउ ॥
साध संगि हरि के गुन गाउ ॥
साध कै संगि न मन ते बिसरै ॥
साध संगि सरपर निसतरै ॥
साध कै संगि लगै प्रभु मीठा ॥
साधू कै संगि घटि घटि डीठा ॥
साध संगि भए आगिआकारी ॥

हे नानक ! साधु संगनि में जन्म सफल होता है ॥५॥

साधु संगति करने से (ईश्वर प्राप्ति के लिए) कोई (तप आदि) प्रयत्न नहीं करना पड़ता,

क्योंकि दर्शन करते ही निहाल हो जाता है।

साधु संगति से पाप दूर हो जाते हैं।

साधु संगति से नरक से बच जाता है।

साधु संगति से लोक परलोक में सुखी होता है।

साधु संगति के कारण ईश्वर से बिछड़े जीव का उस से मिलाप हो जाता है।

जो चाहता है फल पा लेता है,

क्योंकि साधु संग व्यर्थ नहीं होता।

पारब्रह्म साधु हृदय में बसता है।

हे नानक ! सन्तों के रस भरे वचन सुन कर जीव का उद्धार होता है ॥६॥

साधु संगति में (मैं) परमेश्वर का नाम सुनूं।

साधु संगति में (मैं) हरिगुण गान करूं।

साधु संगति से प्रभु मन से नहीं भूलता।

साधु संगति से जीव अवश्य तर जाता है।

साधु संगति से प्रभु मीठा लगता है।

साधु संगति से परमेश्वर सब घटों में देखा जाता है।

साधु संगति से हम आज्ञाकारी हुए हैं।

साध संगि गति भई हमारी ॥
साध कै संगि मिटे सभि रोग ॥
नानक साध भेटे संजोग ॥ ७ ॥
साध की महिमा वेद न जानहि ॥
जेता सुनहि तेता बखिआनहि ॥
साध की उपमा तिहु गुण ते दूरि ॥
साध की उपमा रही भरपूरि ॥
साध की सोभा का नाही अंत ॥
साध की सोभा सदा बेअंत ॥
साध की सोभा ऊच ते ऊची ॥
साध की सोभा मूच ते मूची ॥
साध की सोभा साध बनि आई ॥
नानक साध प्रभ भेदु न भाई ॥ ८ ॥ ७ ॥

सलोकु

मनि साचा मुखि साचा सोइ ॥
अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ ॥
नानक इह लछण ब्रहमगिआनी होइ ॥ १ ॥

असटपदी

ब्रहमगिआनी सदा निरलेप ॥

साधु संगति से हमारी गति हुई है।

साधु संगति से सब रोग दूर हुए हैं।

हे नानक! उत्तम कर्म से साधु मिलाप होता है ॥७।

साधु महिमा को वेद नहीं जानते।

जेता सुना है तेता वह कथन करते हैं।

साधु महिमा त्रिगुणों से परे है।

साधु महिमा सब ब्रह्मंड में पूर्ण है।

साधु महिमा का अन्त नहीं है।

साधु महिमा सदा अन्त रहित है।

साधु महिमा ऊँचों से ऊँची है।

साधु महिमा अधिक से अधिक है।

साधु महिमा साधु को बन आई है।

हे नानक! साधु और प्रभु में कोई भेद नहीं है।

सलोकु

जिस के मन में सत्य रूप प्रभु बसता है और मुख में भी उसी का जाप है।

पुनः नेत्रों से प्रभु स्वरूप बिना किसी दूसरी वस्तु को नहीं देखता,

हे नानक! ब्रह्मज्ञानी के यह लक्षण होते हैं।

असटपदी

ब्रह्मज्ञानी सदा (माया में) निर्लेप है।

जैसे जल महि कमल अलेप ॥
ब्रहमगिआनी , सदा निरदोख ॥
जैसे सूरु सरब कउ सोख ॥

ब्रहमगिआनी कै द्रसटि समानि ॥
जैसे राजा रंक कउ लागै तुलि पवान ॥
ब्रहमगिआनी कै धीरजु एक ॥
जिउ बसुधा कोऊ खोदै कोऊ चंदन लेप ॥

ब्रहमगिआनी का इहै गुनाउ ॥
नानक जिउ पावक का सहज सुभाउ ॥१॥

ब्रहमगिआनी निरमल ते निरमला ॥
जैसे मैलु न लागै जला ॥
ब्रहमगिआनी कै मनि होइ प्रगासु ॥
जैसे धर ऊपरि आकासु ॥
ब्रहमगिआनी कै मित्र सत्र समानि ॥
ब्रहमगिआनी कै नाही अभिमान ॥
ब्रहमगिआनी ऊच ते ऊचा ॥
मनि अपनै है सभ ते नीचा ॥

जैसे जल में कमल अलेप रहता है।

ब्रह्मज्ञानी सदा निर्दोष है,

जैसे सूर्य सब पदार्थों को शोषण करता है (परन्तु उस को कोई
दोष नहीं लगता)।

ब्रह्मज्ञानी समदृष्टि है,

जैसे वायु राजा और रंक सब को सम लगे है।

ब्रह्मज्ञानी के (हृदय में) एक धैर्य दृढ़ है।

जैसे पृथ्वी को कोई खोदता है और कोई चन्दन का लेप
करता है।

हे नानक! ब्रह्मज्ञानी का यह गुण है।

जैसे अग्नि का स्वाभाविक यह गुण है (कि निकटवर्ती पुरुष
का शीत दूर करे है वैसे ब्रह्मज्ञानी भी समीपवर्ती पुरुष
की जड़ता दूर करे है ॥१॥

ब्रह्मज्ञानी अति निर्मल है।

जैसे जल को मल नहीं लगता।

ब्रह्मज्ञानी के मन में आत्म प्रकाश है।

जैसे पृथ्वी के ऊपर भाव सब स्थानों में आकाश पूर्ण है,

ब्रह्मज्ञानी को शत्रु और मित्र सम होते हैं।

ब्रह्मज्ञानी को अहंकार नहीं होता।

ब्रह्मज्ञानी ऊंचों से ऊंचा है, परन्तु
अपने मन में सब से नीचा है।

ब्रहमगिआनी से जन भए ॥
नानक जिन प्रभु आपि करेइ ॥ २ ॥
ब्रहमगिआनी सगल की रीना ॥
आतम रसु ब्रहमगिआनी चीना ॥
ब्रहमगिआनी की सभ ऊपरि मइआ ॥
ब्रहमगिआनी ते कछु बुरा न भइआ ॥
ब्रहमगिआनी सदा सम दरसी ॥
ब्रहमगिआनी की द्रसटि अंमृतु बरसी ॥
ब्रहमगिआनी बंधन ते मुकता ॥
ब्रहमगिआनी की निरमल जुगता ॥
ब्रहमगिआनी का भोजनु गिआन ॥
नानक ब्रहमगिआनी का ब्रहम धिआनु ॥ ३
ब्रहमगिआनी एक ऊपरि आस ॥
ब्रहमगिआनी का नही बिनास ॥
ब्रहमगिआनी कै गरीबी समाहा ॥
ब्रहमगिआनी परउपकार उमाहा ॥
ब्रहमगिआनी कै नाही धंधा ॥
ब्रहमगिआनी ले धावतु बंधा ॥
ब्रहमगिआनी कै होइ सु भला ॥
ब्रहमगिआनी सुफल फला ॥
ब्रहमगिआनी संगि सगल उधारु ॥

हे नानक ! ब्रह्मज्ञानी वह पुरुष हुए हैं,
जिन को परमेश्वर स्वयं करता है । २॥

ब्रह्मज्ञानी सब की धूलि होता है ।
ब्रह्मज्ञानी ने आत्म रस को पहिचाना है ।
ब्रह्मज्ञानी की सब के ऊपर कृपा होती है ।
ब्रह्मज्ञानी से रंचक मात्र भी बुरा नहीं होता ।
ब्रह्मज्ञानी सदा सदा समदर्शी है ।
ब्रह्मज्ञानी की दृष्टि से अमृत बरसता है ।
ब्रह्मज्ञानी बन्धन से मुक्त होता है ।
ब्रह्मज्ञानी की मर्यादा निर्मल होती है ।
ब्रह्मज्ञानी का ज्ञान ही भोजन है ।
हे नानक ! ब्रह्मज्ञानी का सब को ब्रह्मरूप देखना ही ध्यान है ॥३॥
ब्रह्मज्ञानी की एक परमेश्वर पर ही आशा होती है ।
ब्रह्मज्ञानी का विनाश नहीं होता ।
ब्रह्मज्ञानी के मन में गरीबी समाई है ।
ब्रह्मज्ञानी परोपकार में तत्पर रहता है ।
ब्रह्मज्ञानी को कोई धंधा नहीं है ।
ब्रह्मज्ञानी ने भागने वाले मात्र चंचल मन को रोक लिया है ।
ब्रह्मज्ञानी की दृष्टि में जो कुछ होता है सो भला है ।
ब्रह्मज्ञानी श्रेष्ठ फलों से फला है ।
ब्रह्मज्ञानी की संगति से सब का उद्धार होता है ।

नानक ब्रहमगिआनी जपै सगल संसारु ॥४॥

ब्रहमगिआनी कै एकै रंग ॥
ब्रहमगिआनी कै बसै प्रभु संग ॥
ब्रहमगिआनी कै नामु अधारु ॥
ब्रहमगिआनी कै नामु परवारु ॥
ब्रहमगिआनी सदा सद जागत ॥
ब्रहमगिआनी अहं बुधि तिआगत ॥
ब्रहमगिआनी कै मनि परमानंद ॥
ब्रहमगिआनी कै घरि सदा अनंद ॥
ब्रहमगिआनी सुख सहज निवास ॥
नानक ब्रहम गिआनी का नही बिनास ॥५॥
ब्रहमगिआनी ब्रहम का बेता ॥
ब्रहमगिआनी एक संगि हेता ॥
ब्रहमगिआनी कै होइ अचिंत ॥
ब्रहमगिआनी का निरमल मंत ॥
ब्रहमगिआनी जिसु करै प्रभु आपि ॥
ब्रहमगिआनी का बडा परताप ॥
ब्रहमगिआनी का दरसु बड भागी पाईऐ ॥
ब्रहमगिआनी कउ बलि बलि जाईऐ ॥
ब्रहमगिआनी कउ खोजहि महेसुर ॥

हे नानक ! ब्रह्मज्ञानी के वसीलें से सर्व संसार (नाम) जपता है ॥४॥

ब्रह्मज्ञानी के हृदय में सदा एक (ईश्वर) प्रेम रहता है ॥
ब्रह्मज्ञानी के संग प्रभु बसता है ।
ब्रह्मज्ञानी के मन में नाम का आधार है ।
ब्रह्मज्ञानी के लिये नाम ही परिवार है ।
ब्रह्मज्ञानी सदा (आत्मरस) में जागता है ।
ब्रह्मज्ञानी ने अहंबुद्धि का त्याग किया है ।
ब्रह्मज्ञानी के मन में परमानन्द (स्वरुप परमात्मा) बसता है ।
ब्रह्मज्ञानी के मन में सदा आनन्द रहता है ।
ब्रह्मज्ञानी का आत्म-सुख में निवास है ।
हे नानक ! इस लिए ब्रह्मज्ञानी का मरण नहीं होता ॥ ५ ॥
ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म के जानने वाला है ।
ब्रह्मज्ञानी का एक परमेश्वर संग हित होता है
ब्रह्मज्ञानी चिंता रहित होता है ।
ब्रह्मज्ञानी का मन निर्मल होता है ।
ब्रह्मज्ञानी वह है जिस को स्वयं प्रभू करता है ।
ब्रह्मज्ञानी का प्रताप बड़ा होता है ।
ब्रह्मज्ञानी का दर्शन बड़े भागों से प्राप्त होता है ।
ब्रह्मज्ञानी पर बलिहार बलिहार जाइये ।
ब्रह्मज्ञानी को शिवादि भी खोजते हैं

नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर ॥ ६ ॥

ब्रहमगिआनी की कीमति नाहि ॥
ब्रहमगिआनी कै सगल मन माहि ॥
ब्रहमगिआनी का कउनु जानै भेदु ॥
ब्रहमगिआनी कउ सदा अदेसु ॥
ब्रहमगिआनी का कथिआ न जाइ अधाख्यरु ॥

ब्रहमगिआनी सरब का ठाकुरु ॥
ब्रहमगिआनी की मिति कउनु बखानै ॥
ब्रहमगिआनी की गति ब्रहमगिआनी जानै ॥
ब्रहमगिआनी का अंतु न पारु ॥
नानकब्रहमगिआनी कउ सदा नमसकारु ॥ ७ ॥

ब्रहमगिआनी सभ स्रसटि का करता ॥
ब्रहमगिआनी सद जीवै नही मरता ॥
ब्रहमगिआनी मुकति जुगति जीअ का दाता
ब्रहमगिआनी पूरन पुरखु बिधाता ॥
ब्रहमगिआनी अनाथ का नाथ ॥
ब्रहमगिआनी का सभ ऊपरि हाथु ॥
ब्रहमगिआनी का सगल अकारु ॥
ब्रहमगिआनी आपि निरंकारु ॥

हे नानक ! ब्रह्मज्ञानी स्वयं परमेश्वर (रूप) है ॥६॥

ब्रह्मज्ञानी की कीमत नहीं पाई जाती।

ब्रह्मज्ञानी के मन में सब कुछ है।

ब्रह्मज्ञानी का भेद कौन जानता है ?

ब्रह्मज्ञानी को सदा नमस्कार है।

ब्रह्मज्ञानी की रंचक मात्र भी महिमा कथन में नहीं आ सकती।

ब्रह्मज्ञानी सब का स्वामी है।

ब्रह्मज्ञानी की मर्यादा को कौन कहे ?

ब्रह्मज्ञानी की गति को ब्रह्मज्ञानी जानता है।

ब्रह्मज्ञानी का अंत नहीं पाया जाता।

श्री जगत् गुरु जी कहते हैं कि हमारी ब्रह्मज्ञानी को सदा नमस्कार है ॥ ७ ॥

ब्रह्मज्ञानी सब सृष्टि का कर्ता है।

ब्रह्मज्ञानी सदा जीता है, कभी मृत्यु को प्राप्त नहीं होता।

ब्रह्मज्ञानी मुक्ति-युक्ति और जीव दान देने वाला है।

ब्रह्मज्ञानी पूर्ण पुरुष और विधाता है।

ब्रह्मज्ञानी अनाथों का नाथ है।

ब्रह्मज्ञानी का सब के ऊपर हाथ है।

ब्रह्मज्ञानी का सब रूप है।

ब्रह्मज्ञानी स्वयं निरंकार (रूप) है !

ब्रहमगिआनी की सोभा ब्रहमगिआनी बनी ॥
नानक ब्रहमगिआनी सरब का धनी ॥ ८ ॥ ८ ॥

सलोकु

उरि धारै जो अंतरि नामु ॥
सरब मै पेखै भगवानु ॥
निमख निमख ठाकुर नमसकारै ॥
नानक ओहु अपरसु सगल निसतारै ॥ १ ॥

असटपदी ॥

मिथिआ नाही रसना परस ॥
मन महि प्रीति निरंजन दरस ॥
पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र ॥
साध की टहल संत संगि हेत ॥
करन न सुनै काहू की निंदा ॥
सभ ते जानै आपस कउ मंदा ॥
गुर प्रसादि बिखिआ परहरै ॥
मन की बासना मन ते टरै ॥
इंद्री जित पंच दोख ते रहत ॥
नानक कोटि मधे को ऐसा अपरस ॥ १ ॥

ब्रह्मज्ञानी की महिमा ब्रह्मज्ञानी ही को बनी है।
हे नानक ! ब्रह्मज्ञानी सब का धनी है।

सलोकु

जो हृदय में नाम को धारण करे।
और सब में भगवान् देखे, पुनः
पल पल में प्रभु को नमस्कार करे,
हे नानक ! सो अपर्स और सब को तारने वाला है।

असटपदी ॥

जिह्वा करके असत्य भाषण नहीं करता है।
मन में वाहिगुरु दर्शन की प्रीति रखता है।
पर स्त्री का रूप नेत्रों से नहीं देखता है।
साधु सेवा और सन्तों के संग प्रीति करता है।
कानों से किसी की निन्दा नहीं सुनता।
अपने आपको सब से बुरा जानता है।
गुरु-कृपा से विषय वासना रूप विष को त्यागता है।
मन के संकल्प और विकल्पों को मन से दूर करता है।
जितेन्द्रिय और कामादि पांच दोषों से रहित है।
हे नानक ! करोड़ों में कोई एक ही ऐसा अपर्स असंग
होता है ॥१॥

बसनो सो जिसु ऊपरि सुप्रसंन ॥
बिसन की माइआ ते होइ भिंन ॥
करम करत होवै निहकरम ॥
तिसु बैसनो का निरमल धरम ॥
काहू फल की इछा नही बाछै ॥
केवल भगति कीरतन संगि राचै ॥
मन तन अंतरि सिमरन गोपाल ॥
सभ ऊपरि होवत किरपाल ॥
आपि द्रिड़ै अवरह नामु जपावै ॥
नानक ओहु बैसनो परम गति पावै ॥२॥
भगउती भगवंत भगति का रंगु ॥
सगल तिआगै दुसट का संगु ॥
मन ते बिनसै सगला भरमु ॥
करि पूजै सगल पारब्रहमु ॥
साध संगि पापा मलु खोवै ॥
तिसु भगउती की मति ऊतम होवै ॥
भगवंत की टहल करै नित नीति ॥
मनु तनु अरपै बिसन परीति ॥
हरि के चरन हिरदै बसावै ॥
नानक ऐसा भगउती भगवंत कउ पावै ॥३॥
सो पंडितु जो मनु परबोधै ॥

वैष्णव वह है जिस के ऊपर वाहिगुरू स्वयं प्रसन्न हैं।
और जो प्रभु की माया से अतीत है।
अपने धर्म कर्म को करता हुआ फल की इच्छा से रहित है।
उस वैष्णव का निर्मल धर्म है।
किसी भी अनित्य फल की इच्छा न करता हुआ केवल प्रभु-
भक्ति और कीर्तन में ही प्रीति रखता है।
मन तन से वाहिगुरु का स्मरण करे।
सब के ऊपर कृपालु होवे।
स्वयं नाम दृढ़ करके दूसरों को नाम जपाय।
हे नानक ! सो वैष्णव परम गति को प्राप्त होता है।
भगउती सो है जिस को वाहिगुरु भक्ति का रंग चढ़ा हो।
सर्वथा दुष्टों के संग का त्याग करे।
उस के मन से सब भ्रम दूर हो गया हो।
पारब्रह्म को सब में पूर्ण जान कर पूजै।
साधु संगति मे जा कर पाप रूप मल को दूर करे।
वह भगउती उत्तम-बुद्धि होता है।
सर्वदा वाहिगुरू की सेवा करे।
मन तन वाहिगुरू-प्रीति के समर्पण करे।
हरि-चरण हृदय में बसाय, भाव ध्यान करे।
हे नानक ! ऐसा भगउती भगवन्त को पाता है। ३।
पण्डित सो है जो अपने मन को ज्ञानवान करे।

रामु नामु आतम महि सोधै ॥
राम नाम सारु रसु पीवै ॥
उसु पंडत कै उपदेसि जगु जीवै ॥
हरि की कथा हिरदै बसावै ॥
सो पंडितु फिर जोनि न आवै ॥
बेद पुरान सिम्रति बूझै मूल ॥
सूखम महि जानै असथूलु ॥
चहु वरना कउ दे उपदेसु ॥
नानक उस पंडित कउ सदा अदेस ॥
बीज मंत्रु सरब को गिआनु ॥
चहु वरना महि जपै कोऊ नाम ॥
जो जो जपै तिसकी गति होइ ॥
साध संगि पावै जनु कोइ ॥

करि किरपा अंतरि उरधारै ॥
पसु प्रेत मुघद पाथर कउ तारै ॥
सरब रोग का अउखदु नामु ॥
कलिआण रूप मंगल गुण गाम ॥
काहू जुगति कितै न पाईऐ धरमि ॥
नानक तिसु मिलै जिसु लिखिआ धुरि करमि ॥ ५ ॥
जिस कै मनि पारब्रहम का निवासु ॥

राम नाम को मन में विचारे।
राम नाम रूप श्रेष्ठ रस पीवे।
उस पंडित के उपदेश कर जगत आत्म-जीवन प्राप्त करता है।
हरि कथा को अपने हृदय में बसाये।
सो पंडित जन्म मरण रहित हो जाता है।
वेद पुराण और स्मृतियों के सिद्धांत को समझे।
प्रभु में सब सारे दृष्टमान जगत को जान ले।
चारों वर्ण को उपदेश दे।
हे नानक! ऐसे पंडित को सदा नमस्कार है ॥४॥
सब मन्त्रों का बीज ज्ञान है, अथवा बीज मन्त्र जो नाम है, प्राणी मात्र के जानने योग्य है।
चारों वर्णों में से चाहे कोई भी नाम जपे।
जो जो जपेगा उस की मुक्ति होगी।
परन्तु नाम को साधु-संगति से कोई वड़भागी पुरुष ही पाता है।
जिस पर वाहिगुरू कृपा करे सो हृदय में धारण करता है।
नाम पशु प्रेत मूढ़ और पत्थर-सम जीवों को भी तार लेता है।
सब रोगों की दवाई नाम है।
वाहिगुरू के गुणों का गान करना ही मंगल और कल्याण स्वरूप है। यह धर्म किसी युक्ति कर कहीं नहीं प्राप्त होता।
हे नानक! उसको मिलता है जिस को आदि से वाहिगुरू की ओर से बख्शिश का लेख लिखा है ॥५॥
जिस के मन में पारब्रह्म का निवास है,

तिसका नामु मति रामदासु ॥
आतम रामु तिसु नदरी आइआ ॥
दास दसंतण भाइ तिनि पाइआ ॥
सदा निकटि निकटि हरि जानु ॥
सो दासु दरगह परवानु ॥
अपुने दास कउ आपि किरपा करे ॥
तिसु दास कउ सभ सोझी परै ॥
सगल संगि आतम उदासु ॥
ऐसी जुगति नानक रामदासु ॥६॥
प्रभ की आगिआ आतम हितावै ॥
जीवन मुकति सोऊ कहावै ॥
तैसा हरखु तैसा उसु सोगु ॥
सदा अनंदु तह नही बिओगु ॥
तैसा सुवरनु तैसी उसु माटी ॥
तैसा अंमृतु तैसी बिखु खाटी ॥
तैसा मानु तैसा अभिमानु ॥
तैसा रंकु तैसा राजानु ॥
जो वरताए साई जुगति ॥
नानक ओहु पुरखु कहिऐ जीवन मुकति ॥७॥
पारब्रहम के सगले ठाउ ॥
जितु जितु घरि राखै तैसा तिन नाउ॥

उस का नाम निश्चय कर राम-दास है।

उसको सर्व व्यापक राम का दर्शन होता है।

दास भाव से ही उस दास ने वाहिगुरू को पाया है।

सर्वदा हरि को वह समीप ही समीप जानता है।

सो दास परलोक में माननीय होता है।

अपने दास पर प्रभु स्वयं कृपा करता है।

उस दास को परमार्थ की सब सूझ पड़े है।

सब के साथ रहता हुआ स्वयं उदास रहता है।

हे नानक ! ऐसी युक्ति वाला राम दास होता है ॥६॥

प्रभु-आज्ञा जिस के मन में प्यारी लगे,

सो जीवन मुक्त कहाता है।

वह हर्ष और शोक में समबुद्धि है।

उस को सर्वदा आनन्द है, कभी भी आनन्द से उस का
वियोग नहीं होता।

स्वर्ण और मिट्टी उस को एक जैसे हैं।

अमृत व हलाहल जहिर एक जैसे है।

सत्कार और तिरस्कार उस को एक जैसे है।

गरीब व अमीर उस को एक जैसे हैं।

जो परमेश्वर भाणा वरताय सो उस को योग्य जानता है।

हे नानक ! वह पुरुष जीवन मुक्त कहलाता है ॥७॥

सब घट परमात्मा के हैं (अर्थात् वह सब में व्यापक है)।

जैसे घट में (आत्मा को) रक्खे वैसा उन्हों का नाम हो
जाता है।

आपे करन करावन जोगु ॥
प्रभ भावै,सोई फुनि होगु ॥
पसरिओ आपि होइ अनत तरंग ॥
लखे न जाहि पारब्रहम के रंग ॥
जैसी मति देइ तैसा परगास ॥
पारब्रहमु करता अबिनास ॥
सदा सदा सदा दइआलु ॥
सिमरि सिमरि नानक भए निहाल ॥ ८ ॥ ९॥

सलोकु

उसतति करहि अनेक जन अंतु न पारा वार ॥
नानक रचना प्रभि रची बहु बिधि अनिक प्रकार ॥१॥

असटपदी ॥

कई कोटि होइ पूजारी ॥
कई कोटि आचार बिउहारी ॥
कई कोटि भए तीरथ वासी ॥
कई कोटि बन भ्रमहि उदासी ॥
कई कोटि बेद के स्रोते ॥
कई कोटि तपीसुर होते ॥
कई कोटि आतम धिआनु धारहि ॥

आप ही सृष्टि के रचने और रचाने के योग्य है।
जो प्रभु को भाता है सोई फिर होता हैं।
प्रभु आप अपनी सृष्टि में तरंग की भांति अनेक रूप होके पसर रहा है।
उस पारब्रह्म के रंग लखे नहीं जाने।
हां जैसी बुद्धि वह देता है वैसा प्रकाश हो आता है।
आप पारब्रह्म कर्त्ता है पर नाश से रहित है।
वाहिगुरू सदा ही दयालु है।
हे नानक! उस का बार बार स्मरण करके जीव सब दुःखों से मुक्त हुये हैं ॥६॥

सलोकु

अनेक जन प्रभु-स्तुति को करते हैं जिन का अन्त और पारावार नहीं।
हे नानक! प्रभु ने ऐसी रचना रची है जो बहु विधि और अनेक प्रकार की है।

असटपदी ॥

कई करोड़ पूजा करने वाले हुए हैं।
कई करोड़ करम व्यवहार करने वाले हुए हैं।
कई करोड़ तीर्थ वासी हुए हैं।
कई करोड़ उदासीन होकर वनों में भ्रमते हैं।
कई करोड़ वेद श्रवण करने वाले हैं।
कई करोड़ तपीश्वर हुए हैं।
कई करोड़ आत्म-ध्यान धारी हैं।

कई कोटि कवि काबि बीचारहि ॥
कई कोटि नवतन नाम धिआवहि ॥
नानक करते का अंतु न पावहि ॥ १ ॥
कई कोटि भए अभिमानी ॥
कई कोटि अंध अगिआनी ॥
कई कोटि किरपन कठोर ॥
कई कोटि अभिग आतम निकोर ॥

कई कोटि पर दरब कउ हिरहि ॥
कई कोटि पर दूखना करहि ॥
कई कोटि माइआ स्रम माहि ॥
कई कोटि परदेस भ्रमाहि ॥
जितु जितु लावहु तितु तितु लगना ॥

नानक करते की जानै करता रचना ॥ २ ॥
कई कोटि सिध जती जोगी ॥
कई कोटि राजे रस भोगी ॥
कई कोटि पंखी सरप उपाए ॥
कई कोटि पाथर बिरख निपजाए ॥
कई कोटि पवन पाणी बैसंतर ॥
कई कोटि देस भू मंडल ।
कई कोटि ससीअर सूर नख्यत्र ॥

कई करोड़ कवी काव्य को विचार करते है।
कई करोड़ (जीव नित्य प्रभु के) नवीन नाम को ध्याते हैं।
हे नानक! पूर्वोक्त सब जीव कर्तार का अन्त नहीं पा सके॥ १॥
कई करोड़ जीव अभिमान करने वाले हुए हैं।
कई करोड़ महा अज्ञानी हुए हैं।
कई करोड़ कृपण और पत्थर सम कठोर चित्त वाले हुए हैं।
कई करोड़ अभिग-मन और निकोर हुए हैं (जिन पर रंग न चढ़ सके)।
कई करोड़ पर धन को चुराते हैं।
कई करोड़ पराई निन्दा करते हैं।
कई करोड़ माया निमित्त प्रयत्न करते हैं।
कई करोड़ विदेश में भ्रमते हैं।
हे प्रभो! आप जिस जिस ओर जीव को लगाते हो उस उस ओर जीव लगता है।
हे नानक! वाहिगुरू-रचना को स्वयं वाहिगुरूही जानना है। २!
कई करोड़ सिद्ध यती और योगी हुए हैं।
कई करोड़ रस भोगने वाले राजे हुए हैं!
कई करोड़ पक्षी और सर्प प्रभु ने उत्पन्न किए हैं।
कई करोड़ पत्थर और वृक्ष प्रभु ने उत्पन्न किए हैं।
कई करोड़ (जीव) वायु जल और अग्नि (में) प्रभु ने उत्पन्न किए हैं।
कई करोड़ देश और पृथ्वी-मंडल हैं।
कई करोड़ चन्द्रमा सूर्य और तारे हैं।

कई कोटि देव दानव इंद्र सिरि छत्र ॥
सगल समग्री अपनै सूति धारै ॥
नानक जिसु जिसु भावै तिसु तिसु निसतारै ॥३॥
कई कोटि राजस तामस सातक ॥
कई कोटि वेद पुरान सिमृति अरु सासत ॥
कई कोटि कीए रतन समुंद ॥
कई कोटि नाना प्रकार जंत ॥
कई कोटि कीए चिर जीवे ॥
कई कोटि गिरि मेर सुवरन थीवे ॥
कई कोटि जख्य किनर पिसाच ॥
कई कोटि भूत प्रेत सूकर मृगाच ॥
सभ ते नेरै सभहू ते दूरि ॥
नानक आपि अलिपतु रहिआ भरपूरि ॥४॥
कई कोटि पाताल के वासी ॥
कई कोटि नरक सुरग निवासी ॥
कई कोटि जनमहि जीवहि मरहि ॥
कई कोटि बहु जोनी फिरहि ॥
कई कोटि बैठत ही खाहि ॥
कई कोटि घालहि थकि पाहि ॥
कई कोटि कीए धनवंत ॥

कई करोड़ देवता दानव और इन्द्र शिर पर छत्र धारने वाले हैं।
वाहिगुरू इस सब सामग्री को अपनी सत्ता रूप सूत्र में धारन करता है।
हे नानक! जिस जिस पर प्रभू प्रसन्न होता है उस उस को तारता है॥ ३॥

कई करोड़ तामसी राजसी और सात्वकी जीव हैं।
कई करोड़ वेद शास्त्र और स्मृति और पुराण हैं।
कई करोड़ रत्न संयुक्त समुद्र किए हैं।
कई करोड़ अनेक प्रकार के जीव जन्तु हैं।
कई करोड़ चिर-जीवी किए हैं।
कई करोड़ पर्वत और स्वर्णमय सुमेर पर्वत रचे गए हैं।
कई करोड़ यक्ष किन्नर और पिशाच हैं।
कई करोड़ भूत प्रेत बिराह और (मृगाच) शेर हैं।
(व्यापक होने के कारण) प्रभु सब के समीप हैं,
और (अलेप होने के कारण) प्रभु सब से दूर हैं।
हे नानक! प्रभु स्वयं अलिपत है और पूरण है॥ ४॥

कई करोड़ पाताल वासी हैं।
कई करोड़ नरक और स्वर्ग में रहने वाले हैं।
कई करोड़ जन्मते जीवते और मरते हैं।
कई करोड़ बहुती योनिओं में फिरते हैं।
कई करोड़ बैठे ही खाते हैं।
कई करोड़ परिश्रम करते थक जाते हैं।
कई करोड़ धनवन्त किए हैं।

कई कोटि माइआ महि चिंत ॥
जह जह भाणा तह तह राखे ॥
नानक सभु किछु प्रभ कै हाथे ॥ ५ ॥
कई कोटि भए बैरागी ॥
राम नाम संगि तिनि लिव लागी ॥
कई कोटि प्रभ कउ खोजंते ॥
आतम महि पारब्रहमु लहंते ॥
कई कोटि दरसन प्रभ पिआस ॥
तिन कउ मिलिओ प्रभु अबिनास ॥
कई कोटि मागहि सतसंगु ॥
पार ब्रहम तिन्ह लागा रंगु ॥
जिन कउ होए आपि सु प्रसंन ॥
नानक ते जन सदा धनि धंनि ॥ ६ ॥
कई कोटि खाणी अरु खंड ॥
कई कोटि अकास ब्रहमंड ॥
कई कोटि होए अवतार ॥
कई जुगति कीनो बिसथार ॥
कई बार पसरिओ पासार ॥
सदा सदा इकु एकंकार ॥
कई कोटि कीने बहु भाति ॥
प्रभ ते होए प्रभ माहि समाति ॥

कई करोड़ माया में चिन्तातुर हैं।
जहां जहां प्रभु को भाता है वहां वहां प्रत्येक मनुष्य को रखता है।
हे नानक! सब कुछ प्रभु के अपने हाथ में है॥ ५॥
कई करोड़ वैराग्यवान् हुए हैं।
उन की लिव राम-नाम संग लगी है।
कई करोड़ प्रभु को खोजते हैं।
जो अपने मन में पारब्रह्म को पाते हैं।
कई करोड़ जीवों को प्रभु दर्शन की प्यास है।
उन को अविनाशी प्रभु मिला है!
कई करोड़ जीव केवल सत्संगति को मांगते हैं।
क्योंकि उनका प्यार केवल पारब्रह्म से लगा है।
जिन पर प्रभु स्वयं सुप्रसन्न हुए हैं,
हे नानक! वह पुरुष सर्वदा श्लाघा योग्य है॥ ६॥
कई करोड़ खाणी और खंड हैं।
कई करोड़ आकाश और ब्रह्मांड हैं।
कई करोड़ अवतार हुए हैं।
कई युक्तियों से यह विस्तार किया है।
कई वार यह संसार रचा गया है।
सर्वदा नित्य एक एकंकार है।
कई करोड़ जीव बहुत प्रकार के किये हैं।
जो प्रभु से उत्पन्न हो कर प्रभु में समाते हैं।

ताका अंतु न जानै कोइ ॥
आपे आपि नानक प्रभु सोइ ॥ ७ ॥
कई कोटि पारब्रहम के दास ॥
तिन होवत आतम परगास ॥
कई कोटि तत के बेते ॥
सदा निहारहि एको नेत्रे ॥
कई कोटि नाम रसु पीवहि ॥
अमर भए सद सद ही जीवहि ॥
कई कोटि नाम गुन गावहि ॥
आतम रसि सुखि सहजि समावहि ॥
अपुने जन कउ सासि सासि समारे ॥
नानक ओइ परमेसुर के पिआरे ॥ ८ ॥ १० ॥

सलोकु

करण कारण प्रभु एकु है दूसर नाही कोइ ॥
नानक तिसु बलिहारणै जलि थलि महीअलि सोइ ॥१

असटपदी

करन करावन करनै जोगु ॥
जो तिसु भावै सोई होगु ॥
खिन महि थापि उथापन हारा ॥

उस प्रभु का अन्त कोई नहीं जानता।
हे नानक! सो प्रभु आप ही आप है॥ ७॥
कई करोड़ प्रभु के दास हैं।
उन को आत्म प्रकाश होता है।
कई करोड़ तत्व वेते हैं,
जो सर्वदा एक प्रभु को ही नेत्रों से देखते हैं।
कई करोड़ नाम रस को पीते हैं।
अमर हुए वह सर्वदा जीते हैं।
कई करोड़ नाम-गुण को गाते हैं।
वह स्वभाविक आत्म सुख के रस में समाते हैं!
प्रभु अपने दासों को श्वास श्वास याद करता है।
हे नानक! वह परमेश्वर के प्यारे हैं॥ ८॥ १०॥

सलोकु

जगत का मूल-कारण एक प्रभु है दूसरा कोई नहीं।
श्री सतगुरू जी कहते हैं हम उस प्रभु पर वलिहार जाते हैं
क्योंकि वह जल थल पृथ्वी और आकाश मे पूर्ण है।

असटपदी

करने को और कराने को वह प्रभु करने योग्य है।
जो उस को भाता है सो होता है।
क्षण में बनाने और बिगाड़ने वाला है।

अंतु नहीं किछु पारावारा ॥
हुकमे धारि अधार रहावै ॥
हुकमे उपजै हुकमि समावै ॥
हुकमे ऊच नीच बिउहार ॥
हुकमे अनिक रंग परकार ॥
करि करि देखै अपुनी वडिआई ॥
नानक सभ महि रहिआ समाई ॥ १ ॥
प्रभ भावै मानुख गति पावै ॥
प्रभ भावै ता पाथर तरावै ॥
प्रभ भावै बिनु सास ते राखै ॥
प्रभ भावै ता हरि गुण भाखै ॥
प्रभ भावै ता पतित उधारै ॥
आपि करै आपन बीचारै ॥
दुहा सिरिआ का आपि सुआमी ॥
खलै बिगसै अंतरजामी ॥
जो भावै सो कार करावै ॥
नानक द्रिसटी अवरु न आवै ॥ २ ॥
कहु मानुख ते किआ होइ आवै ॥
जो तिसु भावै सोई करावै ॥

उस के अन्त का कुछ पारावार नहीं।
अपनी आज्ञा में सृष्टि धारण की है और स्वयं आधार रहित रहता है।
प्रभु-आज्ञा में सृष्टि उत्पन्न और नाश होती है।
प्रभु-आज्ञा में ऊंच नीचादि सब व्यवहार हो रहा है।
प्रभु-आज्ञा में अनेक प्रकार के खेल तमाशे हो रहे हैं।
(सृष्टि) बना बना कर अपनी बड़ाई को स्वयं ही देखता है।
हे नानक ! वह प्रभु सब में समा रहा है ॥ १ ॥
यदि प्रभु को भा जाए तो मनुष्य गति को प्राप्त होता है।
यदि प्रभु को भावे तब पत्थरों को तरा देता है।
यदि प्रभु को भा जाय तब (जीव को) प्राण रहित (भी) रख लेता है।
यदि प्रभु को भावे तब जीव हरि-गुण गाता है।
यदि प्रभु को भा जाय तब पतितों का भी उद्धार करता है।
स्वयं करता है और स्वयं विचारता है।
दोनों ओर भाव भले और बुरे का स्वामी आप है।
अन्तर्यामी स्वयं ही संसार का खेल खेलता है (और स्वयं ही देख कर) प्रसन्न होता है।
जो उस को भाता है सो कार्य कराता है।
हे नानक ! बिना उस के कोई दूसरा दृष्टि में नहीं आता २॥
कहो मनुष्य से क्या हो सकता है ?
जो उस प्रभु को भाता है सो कार्य्य कराता है।

इस कै हाथि होइ ता सभु किछु लेइ ॥
जो तिसु भावै सोई करेइ ॥
अनजानत बिखिआ महि रचै ॥
जे जानत आपन आप बचै ॥
भरमे भूला दहदिसि धावै ॥
निमख माहि चारि कुंट फिरि आवै ॥
करि किरपा जिसु अपनी भगति देइ ॥
नानक ते जन नामि मिलेइ ॥ ३ ॥
खिन महि नीच कीट कउ राज ॥
पारब्रहम गरीब निवाज ॥
जाका द्रसटि कछु न आवै ॥
तिसु ततकाल दहदिस प्रगटावै ॥
जाकउ अपुनी करै बखसीस ॥
ताका लेखा न गनै जगदीस ॥
जीउ पिंडु सभु तिसकी रासि ॥
घटि घटि पूरन ब्रहम प्रगास ॥
अपनी बणत आपि बनाई ॥
नानक जीवै देखि बड़ाई ॥४॥
इस का बलु नाही इसु हाथ ॥
करन करावन सरब को नाथ ॥
आगिआ कारी बपुरा जीउ ॥

यदि इस (जीव) के हाथ में हो तब सब पदार्थ छीन ले।
(परन्तु) जो उस प्रभु को भाता है, वही करता है।
अज्ञातपने में यह जीव माया में फंसता है।
यदि जाने तब अपने आप बच जाय।
भ्रम कर भूला हुआ दशों दिशा में दौड़ता है।
एक निमिष मे चारो दिशा घूम आता है।
जिस को प्रभु कृपा करके अपनी भक्ति देता है,
हे नानक! सो जन नाम को प्राप्त हुए हैं ॥ ३ ॥
क्षण में छोटे कीड़ कीट (अति रंक) को राजा बना देता है।
पारब्रह्म ग़रीब-निवाज़ है।
जिस जीव का नामादि कछु न दिखाई देता हो,
उस को तत्काल ही दशों दिशा में प्रकट कर देता है।
जगत का मालक प्रभु जिस पर अपनी बख़शिश करता है,
उस का लेखा नहीं करता।
जीव और शरीर उस प्रभु की पूंजी है।
घट घट में पूर्ण ब्रह्म का ही प्रकाश हो रहा है।
अपनी बनत प्रभु ने आप बनाई है।
हे नानक! जीव उसकी बड़ाई को देख कर जीता है ॥ ४ ॥
इस जीव का बल इस के (अपने) हाथ नहीं।
करने और कराने वाला परमेश्वर है जो सब का स्वामी है।
यह विचारा जीव तो आज्ञाकारी है।

जो तिसु भावै सोई फुनि थीउ ॥
कबहू ऊच नीच महि बसै ॥
कबहू सोग हरख रंगि हसै ॥
कबहू निंद चिंद बिउहार ॥
कबहू ऊभ अकास पइआल ॥
कबहू बेता ब्रहम बीचार ॥
नानक आपि मिलावनहार ॥ ५ ॥
कबहू निरति करै बहु भाति ॥
कबहू सोइ रहै दिन राति ॥
कबहू महा क्रोधु बिकराल ॥
कबहू सरब की होत रवाल ॥
कबहू होइ बहै बड राजा ॥
कबहू भेखारी नीच का साजा ॥
कबहू अप कीरति महि आवै ॥
कबहू भला भला कहावै ॥
जिउ प्रभु राखै तिव ही रहै ॥
गुरप्रसादि नानक सचु कहै ॥ ६ ॥
कबहू होइ पंडित करै बख्यानु ॥
कबहू मोनि धारी लावै धिआनु ॥
कबहू तट तीरथ इसनान ॥
कबहू सिध साधिक मुखि गिआन ॥

जो उस को भाता है पुनः सो होता है।

कभी यह जीव ऊंची और नीची (योनियों) में बसता है।

कभी शोक में है और कभी हर्ष के रंग में हंसता है।

कभी निन्दा और स्तुति के व्यवहार में लगता है।

कभी ऊपर आकाश और नीचे पाताल में जाता है।

कभी ज्ञानी हो कर ब्रह्म-विचार करता है।

हे नानक ! प्रभु आप मिलाने वाला है ॥ ५ ॥

कभी बहुत प्रकार की नृत्य करता है।

कभी दिन रात सो रहता है।

कभी महाक्रोध में भयंकर रूप धारता है।

कभी सब के चरणों की धूलि होता है।

कभी बड़ा राजा हो कर बैठता है।

कभी नीच भीख-मंगे का साज बना लेता है।

कभी निन्दा में आता है।

कभी भला भला कहाता है।

जिस प्रकार प्रभु रखता है उसी प्रकार यह जीव रहता है।

हे नानक ! गुरू कृपा से जीव ऐसे प्रभु का स्मरण करता है ॥६॥

कभी पंडित हो कर व्याख्यान करता है।

कभी मौन धार कर ध्यान लगाता है।

कभी तीर्थों के किनारे वस कर उन में स्नान करता है।

कभी सिद्ध और साधक हो कर मुख से ज्ञान कथन करता है।

कबहूं कीट हसत पतंग होइ जीआ ॥
अनिक जोनि भरमै भरमीआ ॥
नाना रूप जिउ स्वांगी दिखावै ॥
जिउ प्रभ भावै तिवै नचावै ॥
जो तिसु भावै सोई होइ ॥
नानक दूजा अवरु न कोइ ॥ ७ ॥
कबहूं साध संगति इहु पावै ॥
उसु असथान ते बहुरि न आवै ॥
अंतरि होइ गिआन परगासु ॥
उसु असथान का नही बिनासु ॥
मन तन नामि रते इक रंगि ॥
सदा बसहि पारब्रहम कै संगि ॥
जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥
तिउ जोती संगि जोति समाना ॥
मिटि गए गवन पाए बिस्राम ॥
नानक प्रभ कै सद कुरबान ॥ ८ ॥ ११ ॥

सलोकु

सुखी बसै मसकीनीआ आपु निवारि तले ॥
बडे बडे अहंकारीआ नानक गरबि गले ॥ १ ॥

कभी कीट हाथी और पतंग हो कर जीता है।
अनेक योनियों में भ्रमण कर रहा है,
जैसे स्वांगी कई रूप दिखाता है।
जैसे प्रभु को भाता है वैसे नचाता है।
जो उस को भाता है सो होता है।
हे नानक! प्रभु विना और दूसरा कोई नहीं ॥ ७ ॥
कभी यह जीव साधु संगति को प्राप्त करता है।
उस स्थान से पुनः जन्म कर संसार में नहीं आता।
(कारण कि) हृदय में ज्ञान का प्रकाश होता है।
उस (आत्म) स्थान का विनाश नहीं होता।
जो मन और तन कर एक नाम-रंग में रंगे हैं
और सदा पारब्रह्म के संग वसे हैं।
जैसे जल में जल आ कर मिलता है,
वह तैसे परमात्मा में जीव मिल जाता है।
उस का आना और जाना मिट गया क्योंकि उस ने विश्राम पा लिया है।
श्री सत् गुरू जी कहते है हम सदा प्रभु पर कुर्वान जाते हैं ॥ ८ ॥ ११ ॥

सलोकु

सुखी वसता है गरीब जिस ने आपा-भाव दूर करके नम्रता धारण की है।
हे नानक! वड़े वड़े जो अहंकारी हैं सो अपने अहंकार में गले हैं।

असटपदी

जिसकै अंतरि राज अभिमानु ॥
सो नरक पाती होवत सुआनु ॥
जो जानै मै जोबनवंतु ॥
सो होवत बिसटा का जंतु ॥
आपस कउ करम वंतु कहावै ॥
जनमि मरै बहु जोनि भ्रमावै ॥
धन भूमि का जो करै गुमानु ॥
सो मूरखु अंधा अगिआनु ॥
करि किरपा जिसकै हिरदै गरीबी बसावै ॥
नानक ईहा मुकतु आगै सुखु पावै ॥
धनवंता होइ करि गरबावै ॥
तृण समान कछु संगि न जावै ॥
बहु लसकर मानुख ऊपरि करै आस ॥
पल भीतरि ताका होइ बिनास ॥
सभ ते आप जानै बलवंतु ॥
खिन महि होइ जाइ भसमंतु ॥
किसै न बदै आपि अहंकारी ॥
धरम राइ तिसु करे खुआरी ॥
गुर प्रसादि जाका मिटै अभिमानु ॥
सो जनु नानक दरगह परवानु ॥२॥

असटपदी

जिस मनुष्य के मन में राज का अभिमान है,
सो नरक में पड़ता और कुत्ता होता है।
जो जानता है कि मैं युवावस्था वाला हूँ,
सो विष्ठा का कीड़ा होता है।
जो अपने आप को (अच्छे) कर्म करने वाला कहाता है,
वह जन्मता मरता और बहुत योनियों में भ्रमता है।
धन और भूमि का जो अहंकार करता है,
सो मूढ़ अन्धा अज्ञानी है।
प्रभु कृपा करके जिस के हृदय में गरीबी बसाता है,
हे नानक ! वह जीवन-मुक्त हो कर परलोक में सुख पाता है ।१।
धनवान हो कर जो अहंकार करता है (सो भूलता है),
(क्योंकि) तृण सम भी कुछ साथ नहीं जाता।
बहुतसी फौज और मनुष्यों पर जो भरोसा करता है,
उस का नाश पल भर में हो जाता है।
जो अपने आप को सब से बलवान जानता है,
सो क्षण में राख हो जाता है।
जो किसी को अपने समान न जान कर अपने आप में अहंकारी है,
उस को धर्मराज खुवार करता है।
गुरु की कृपा से जिसका अहंकार मिट जाय,
नानक ! सो जन प्रभु दरबार में परवान होता है ॥ २ ॥

काटि करम करे हउ धारे ॥
स्रमु पावै सगले बिरथारे ॥
अनिक तपसिआ करे अहंकार ॥
नरक सुरग फिरि फिरि अवतार ॥
अनिक जतन करि आतम नही द्रवै ॥
हरि दरगह कहु कैसे गवै ॥
आपस कउ जो भला कहावै ॥
तिसहि भलाई निकटि न आवै ॥
सरब की रेन जाका मनु होइ ॥
कहु नानक ताकी निरमल सोइ ॥ ३ ॥
जब लगु जानै मुझ ते कछु होइ ॥
तब इस कउ सुखु नाही कोइ ॥
जब इह जानै मै किछु करता ॥
तब लगु गरभ जोनि महि फिरता ॥
जब धारै कोऊ बैरी मीतु ॥
तब लगु निहचलु नाही चीतु ॥
जब लगु मोह मगन संगि माइ ॥
तब लगु धरम राइ देइ सजाइ ॥
प्रभ किरपा ते बंधन तूटै ॥
गुर प्रसादि नानक हउ छूटै ॥ ४ ॥
सहस खटे लख कउ उठि धावै ॥

कोटिशः कर्म करता हुआ जो अहंकार करता है,
सो केवल कष्ट पाता है, उस के सब कर्म व्यर्थ हैं।
जो अनेक प्रकार की तपस्या करता हुआ अहंकार करता है।
सो नरक और स्वर्ग में जा कर वार वार जन्म लेता है।
अनेक यत्न करने पर भी जिस का मन द्रव्यता नहीं,
कहो सो प्रभु दरबार में किस प्रकार जा सकता है ?
जो अपने आप को भला कहाता है,
भलाई उस के समीप नहीं आती।
जिस का मन सब की धूलि बनता है,
हे नानक ! उस की शोभा निर्मल है ॥ ३ ॥

जब तक यह जीव जानता है कि मुझ से कुछ होता है,
तब तक उस को कोई सुख नहीं।
जब तक यह जानता है कि मैं कुछ करता हूँ,
तब तक गर्भ योनि में फिरता है।
जब तक यह किसी को शत्रु और मित्र जानता है,
तब तक निश्चल-चित्त नहीं है।
जब तक मोह माया में मग्न है, तब तक उस को धर्मराज
दंड देता है।
प्रभु कृपा कर बन्धन टूटते हैं।
हे नानक ! गुरु की कृपा से अहंता छूटती है ॥ ४ ॥
हज़ार कमा कर लाख निमित्त उठ कर दौड़ता है।

त्रिपति न आवै माइआ पाछै पावै ॥
अनिक भोग बिखिआ के करै ॥
नह त्रिपतावै खपि खपि मरै ॥
बिना संतोख नही कोऊ राजै ॥
सुपन मनोरथ ब्रिथे सभ काजै ॥
नाम रंगि सरब सुखु होइ ॥
बडभागी किसै परापति होइ ॥
करन करावन आपे आपि ॥
सदा सदा नानक हरि जापि ॥ ५ ॥
करन करावन करनै हारु ॥
इस कै हाथि कहा बीचारु ॥
जैसी द्रिसटि करे तैसा होइ ॥
आपे आपि आपि प्रभु सोइ ॥
जो किछु कीनो सु अपनै रंगि ॥
सभ ते दूरि सभहू कै संगि

आपहि एक आपहि अनेक ॥
मरै न बिनसै आवै न जाइ ॥
नानक सदा ही रहिआ समाइ ॥ ६ ॥
आपि उपदेसै समझै आपि ॥

माया को इकत्र करने तृप्त नही होता।
विषयों (माया) के अनेक भोग करता है।
तृप्त नहीं होता। खप खप के मरता है।
संतोष बिना कोई आदमी तृप्त नहीं होता।
स्वप्न-मनोरथ सम उसके सब कार्य व्यर्थ हैं।
नाम रंग कर सर्व सुख प्राप्त होते हैं,
परन्तु सो नाम रंग किसी बड़भागी पुरुष को प्राप्त होता है।
करने और कराने वाला आप ही आप है।
हे नानक ! जीव सर्वदा नित्य प्रभु को जप ॥ ५ ॥
करने कराने और करने वाला आप है।
इस (जीव) के हाथ कहां कोई विचार है।
प्रभु जैसी दृष्टि करता है जीव वैसा बनता है।
(क्योंकि) सो तीन काल में स्वयं ही है।
जो कुछ उस ने किया है सो अपनी मौज में किया है।
(अज्ञानवश दृष्टि में नहीं आता, अतः एव) सब से दूर है

(व्यापक होने के कारण) सब के संग है।

स्वयं ही समझता है, देखता है और विचार करता है।
स्वयं ही एक है और स्वयं ही अनेक है।
मरता नहीं, विनसता नहीं, न आता है, न जाता है।
हे नानक ! प्रभु सर्वदा सब में समा रहा है ॥ ६ ॥
आप ही उपदेश करता है और आप ही समझता है।

आपे रचिआ सभकै साथि ॥
आपि कीनो आपन बिसथारु ॥
सभु कछु उसका ओहु करनै हारु ॥
उसते भिंन कहहु किछु होइ ॥
थान थनंतरि एकै सोइ ॥
अपुने चलित आपि करणै हार ॥
कउतक करै रंग आपारु ॥
मन महि आपि मन अपुने माहि ॥
नानक कीमति कहनु न जाइ ॥ ७ ॥
सति सति सति प्रभु सुआमी ॥
गुरप्रसादि किनै वखिआनी ॥
सचु सचु सचु सभु कीना ॥
कोटि मधे किनै बिरलै चीना ॥
भला भला भला तेरा रूप ॥
अति सुंदर अपार अनूप ॥
निरमल निरमल निरमल तेरी बाणी ॥
घटि घटि सुनी स्रवण बख्याणी ॥

पवित्र पवित्र पवित्र पुनीत ॥

नामु जपै नानक मनि प्रीति ॥ ८ ॥ १२ ॥

स्वयं ही सब के संग रच रहा है।
स्वयं ही किया है अपने आप का विस्तार।
सब कुछ उस का है, क्योंकि वह रचने वाला है।
उस से भिन्न कुछ होता है तब कहो?
हर स्थान में वह आप ही है।
अपने खेल आप ही कर रहा है।
अपार रंगों के कौतुक करता है।
जीव में स्वयं बसता है और जीव उस में बसता है।
हे नानक! उस की कीमत नहीं कही जाती ॥ ७ ॥
प्रभु स्वामी आदि मध्य और अन्त में सत्य है।
यह बात गुरु-कृपा से किसी एक महा पुरुष ने कही है।
आदि मध्य और अन्त में सब सत्य ही सत्य किया है।
यह सत्य स्वरूप करोड़ों में किसी एक ने जाना है।
आदि मध्य और अन्त में हे प्रभु तेरा रूप भला है।
अति सुन्दर अपार और अनुपम है।
तीनों काल में तेरी वाणी निर्मल है।
प्रत्येक हृदय में सुनी जाती है, अपने श्रवणों संग सुन कर मैं ने भी कथन किया है।
(कथन करने वाले, श्रवण करने वाले, धारण करने वाले) यह सब ही पवित्र हैं।
अतः एव, हे नानक! प्रभु का दास प्रीति पूर्वक नाम जपता है ॥ ८ ॥ १२ ॥

सलोकु

संत सरनि जो जनु परै सो जनु उधरन हार ॥

संत की निंदा नानका बहुरि बहुरि अवतार ॥ १ ॥

असटपदी ॥

संत कै दूखनि आरजा घटै ॥
संत कै दूखनि जम ते नही छुटै ॥
सत कै दूखनि सुखु सभु जाइ ॥
संत कै दूखनि नरक महि पाइ ॥
संत कै दूखनि मति होइ मलीन ॥
संत कै दूखनि सोभा ते हीन ॥
संत के हते कउ रखै न कोइ ॥
संत कै दूखनि थान भ्रसटु होइ ॥
संत कृपाल कृपा जे करै ॥
नानक सत संगि निंदक भी तरै ॥ १ ॥

संत कै दूखनि ते मुखु भवै ॥
संतन कै दूखनि काग जिउ लवै ॥
संतन कै दूखनि सरप जोनि पाइ ॥
संत कै दूखनि त्रिगद जोनि किरमाइ ॥
सतन कै दूखनि त्रिसना महि जलै ॥

सलोकु

जो पुरुष सन्त-शरण में पड़ा है सो तरने योग्य है।

हे नानक ! सन्त-निन्दा बार बार जन्म देने वाली है।

असटपदी

सन्त को दूषण लगाने से आयु कम होती है।

सन्त को दूषण लगाने से जीव यम से नहा छूटता।
सन्त को दूषण लगाने से सब सुख दूर हो जाता है।
सन्त को दूषण लगाने से नरक में डाला जाता है।
सन्त को दूषण लगाने से बुद्धि मलिन हो जाती है।
सन्त को दूषण लगाने से जीव शोभा से रहित हो जाता है।
सन्त के फिटकारे हुवे की कोई रक्षा नहीं कर सकता।
सन्त को दूषण लगाने से जीव स्वस्थान से भ्रष्ट हो जाता है।
कृपालु सन्त यदि कृपा करे,
हे नानक ! तब सन्त-निन्दक भी साधु-संग से तर जाता है ॥ १ ॥
सन्त को दूषण लगाने से मुख फिर जाता है।
सन्त को दूषण लगाने से काक सम बोलता है।
सन्त को दूषण लगाने से सर्प-योनि पाता है।
सन्त को दूषण लगाने से कीड़े आदि टेढ़ी योनि पाता ।
सन्त को दूषण लगाने से तृष्णा रूप अग्नि में जलता है।

संत कै दूखनि प्रभु को छलै ॥
संत कै दूखनि तेजु सभु जाइ ॥
संत कै दूखनि नीचु नीचाइ ॥
संत दोखी का थाउ को नाहि ॥
नानक संत भावै ता ओइ भी गति पाहि ॥ २ ॥
संत का निंदकु महा अतताई ॥
संत का निंदकु खिनु टिकनु न पाई ॥
संत का निंदकु महा हतिआरा ॥
संत का निंदकु परमेसुरि मारा ॥
संत का निंदकु राज ते हीनु ॥
संत का निंदकु दुखीआ अरु दीनु ॥
संत के निंदक कउ सरब रोग ॥
संत के निंदक कउ सदा बिजोग ॥
संत की निंदा दोख महि दोखु ॥
नानक संत भावै ता उस का भी होइ मोखु ॥ ३ ॥
संत का दोखी सदा अपवितु ॥
संत का दोखी किसै का नही मितु ॥
संत के दोखी कउ डानु लागै ॥
संत के दोखी कउ सभु तिआगै ॥
संत का दोखी महा अहंकारी ॥
संत का दोखी सदा बिकारी ॥

सन्त को दूषण लगाने वाले को हरएक जीव कपटीप्रतीत होता है।
साधु को दूषण लगाने से सब प्रताप नष्ट हो जाता है।
साधु को दूषण लगाने से जीव महा नीच से नीच हो जाता है।
सन्त-दोषी का कोई ठिकाना नहीं है।
हे नानक ! सन्त निन्दक भी सन्त-कृपा से मुक्त होता है॥ २॥
सन्त-निन्दक अत्याचारी है।
सन्त निंदक क्षण मात्र भी कहीं ठहरना नहीं पाता।
सन्त निंदक महा हत्यारा है।
सन्त-निंदक परमेश्वर का मारा हुआ है।
सन्त निंदक तेज प्रताप से विहीन होता है।
सन्त निंदक दुःखी और दीन होता है।
साधु-निंदक को सब रोग लगते है।
साधु निंदक को सदा (प्रभु से) वियोग रहता है।
सन्त-निंदा दोषों में सब से बड़ा दोष है।
हे नानक ! सन्त-निंदक की भी सन्त कृपा से मुक्ति होती है।३।
सन्त दोषी सदा अपवित्र है।
संत-दोषी किसी का मित्र नहीं बनता।
सन्त-दोषी को (धर्म राज का) दण्ड लगता है।
सन्त दोषी को सब त्यागते हैं।
सन्त दोषी महा अहंकारी है।
सन्त दोषी सदा विकारों में रहता है।

संत का दोखी जनमै मरै ॥
संत की दूखना सुख ते टरै ॥
संत के दोखी कउ नाही ठाउ ॥
नानक संत भावै ता लए मिलाइ ॥ ४ ॥

संत को दोखी अध बीच ते टूटै ॥
संत का दोखी कितै काजि न पहूचै ॥
संत के दोखी कउ उदिआन भ्रमाईऐ ॥
संत का दोखी उझड़ि पाईऐ ॥
संत का दोखी अंतर ते थोथा ॥
जिउ सास बिना मिरतक की लोथा ॥
संत के दोखी की जड़ किछु नाहि ॥
आपन बीजि आपे ही खाहि ॥

संत के दोखी कउ अवरु न राखनहारु ॥
नानक संत भावै ता लए उबारि ॥ ५ ॥

संत का दोखी इउ बिललाइ ॥
जिउ जल बिहून मछुली तड़फड़ाइ ॥
संत का दोखी भूखा नही राजै ॥
जिउ पावकु ईधनि नही ध्रापै ॥
संत का दोखी छुटै इकेला ॥

सन्त-दोषी जन्मता और मरता है।

सन्त को दूषण लगाने से जीव सुख-विहीन रहता है।

सन्त-दोषी का कोई ठिकाना नहीं है।

हे नानक! यदि सन्त चाहे तब उस (निंदक) को भी मिला लेता है॥ ४॥

सन्त-दोषी अर्ध बीच से टूटता है।

सन्त-दोषी का कोई कार्य्य पूर्ण नहीं होता।

सन्त-दोषी उद्यान में रस्ता भूले हुए की तरह भटकता है,

और कुमार्ग में पड़ा रहता है।

सन्त-दोषी अदर से खाली होता भाव सब-गुण-रहित है,

जैसे श्वास बिन मृतक शरीर होता है।

सन्त-दोषी का कुछ मूल नहीं होता।

सो अपने किये का फल आप ही भोगता है भाव मंद कर्मों मंद-फल को भोगता है।

सन्त-दोषी का और कोई रक्षक नहीं है।

नानक! यदि सन्त चाहे तब उस निंदक का भी उद्धार कर लेता है॥ ५

सन्त-दोषी इस प्रकार विलाप करता है,

जैसे जल-विहीन मछली तड़पती है।

सन्त दोषी सर्वदा भूखा है तृप्त नहीं होता,

जैसे अग्नि काष्ट से तृप्त नहीं होती।

सन्त का दोषी इकेला ही रह जाता है।

जिउ बूआड़ु तिलु खेत माहि दुहेला ॥
संत का दोखी धरम ते रहत ॥
संत का दोखी सद मिथिआ कहत ॥
किरतु निंदक का धुरि ही पइआ ॥
नानक जो तिसु भावै सोई थिआ ॥ ६ ॥
संत का दोखी बिगड़रूपु हो जाइ ॥
संत के दोखी कउ दरगह मिलै सजाइ ॥
संत का दोखी सदा सहकाईऐ ॥
संत का दोखी न मरै न जीवाईऐ ॥
संत के दोखी की पुजै न आसा ॥
संत का दोखी उठि चलै निरासा ॥
संत कै दोखी न त्रिसटै कोइ ॥
जैसा भावै तैसा कोई होइ ॥
पइआ किरतु न मेटै कोइ ॥
नानक जानै सचा सोइ ॥ ७ ॥
सभ घट तिसके ओहु करनैहारु ॥
सदा सदा तिस कउ नमसकारु ॥
प्रभ की उसतति करहु दिनु राति ॥
तिसहि धिआवहु सासि गिरासि ॥
सभु कछु वरतै तिस का कीआ ॥
जैसा करे तैसा को थीआ ॥

जैसे तिलों के खेत में बुआढ़ दुःखी रहता है।
सन्त-दोषी धर्म रहित होता है।
सन्त-दोषी सर्वदा मिथ्या वचन बोलता है।
निंदक का यह निंदा वाला स्वभाव आदि से ही चला आता है।
हे नानक ! जो प्रभु को भाता है सो होता है ॥ ६ ॥

सन्त का दोषी भ्रष्ट-मुख हो जाता है।
सन्त-दोषी को परलोक मे दण्ड मिलता है।
सन्त का दोषी सदा सहकाईता है, अर्थात्
सन्त-दोषी न मरता है, न जीता है, भाव अति दुःखी होता है।
सन्त-दोषी की आशा पूर्ण नहीं होती।
सन्त-दोषी (ससार मे) निराश ही उठ कर जाता है।
सन्त को दूषण लगाने से कोई स्थिर नहीं होता।
जैसा प्रभु को भाता है वैसा हो जाता है।
कर्मानुसार जो सस्कार बन गये हैं सो कोई नहीं मेट सकता।
हे नानक ! (इस बात को) प्रभु स्वयं ही जानता है ॥ ७ ॥

सब आकार उस प्रभु के बनाये हुए है, वही करने वाला है।
सदा उसको नमस्कार है।
दिन रात सदा प्रभु स्तुति करो।
श्वास श्वास उसका ध्यान करो।
सब कुछ उस का किया हो रहा है।
जैसा कोई कर्म करता है वैसा हो जाता है।

अपना खेलु आपि करनैहारु ॥
दूसर कउनु कहै वीचारु ॥
जिसनो कृपा करै तिसु आपन नामु देइ ॥
वडभागी नानक जन सेइ ॥ ८ ॥ १३ ॥

सलोकु

तजहु सिआनप सुरि जनहु सिमरहु हरि हरि राइ ॥
एक आस हरि मनि रखहु नानक दूखु भरमु भउ जाइ॥

असटपदी ॥

मानुख की टेक वृथी सभ जानु ॥
देवन कउ एकै भगवानु ॥
जिसकै दीऐ रहै अघाइ ॥
बहुरि न तृसना लागै आइ ॥
मारै राखै एको आपि ॥
मानुख कै किछु नाही हाथि ॥
तिसका हुकमु बूझि सुखु होइ ॥
तिसका नामु रखु कंठि परोइ ॥
सिमरि सिमरि सिमरि प्रभु सोइ ॥
नानक बिघनु न लागै काइ ॥ १ ॥
उसतति मन महि करि निरंकार ॥

अपना खेल आप ही करने वाला है।

दूसरा और कौन इस बिचार को कथन करे?

प्रभु जिस पर कृपा करता है उस को अपना नाम देता है।

हे नानक! सो पुरुष बड़े भाग्य वाला है ॥ ८ ॥ १२ ॥

सलोकु

हे बुद्धिमान पुरुषो! अपनी चतुराई को त्याग कर केवल प्रभु-स्मरण करो।

एक ईश्वर की आश मन में रक्खो, श्री जगत् गुरु जी कहते हैं, तब दुःख, भ्रम और भय दूर हो जायेगा ॥ १ ॥

असटपदी ॥

मनुष्य की टेक सब व्यर्थ जान।

देने वाला एक भगवान् है,

जिस के दिये दान से सब जीव तृप्त होता है,

(और) पुनः तृष्णा आकार नहीं व्याप्ती।

मारने और रखने वाला एक आप ही प्रभु है।

मनुष्य के हाथ में कुछ भी नहीं।

प्रभु-आज्ञा मानने में सुख होता है,

(अतः एव) प्रभु नाम को परो कर कंठ में धारण करो।

सदा प्रभू-स्मरण करो।

हे नानक! पुनः कोई विघ्न नहीं लगेगा ॥ १ ॥

मन में ईश्वर-स्तुति कर।

करि मन मेरे सति बिउहार ॥
निरमल रसना अंमृतु पीउ ॥
सदा सुहेला करि लेहि जीउ ॥
नैनहु पेखु ठाकुर का रंगु ॥
साध संगि बिसै स भसंगु ॥
चरन चलउ मारगि गोबिंद ॥
मटहि पाप जपिऐ हरि बिंद ॥
कर हरि करम स्रवनि हरि कथा ॥

हरि दरगह नानक ऊजल मथा ॥ २ ॥
बडभागी ते जन जग माहि ॥
सदा सदा हरि के गुन गाहि ॥
राम नाम जो करहि बीचारु ॥
से धनवंत गनो संसार ॥
मनि तनि मुखि बोलहि हरि मुखी ॥

सदा सदा जानहु ते सुखी ॥
एको एकु एकु पछानै ॥
इत उत की ओहु सोझी जानै ॥
नाम संगि जिसका मनु मानिआ ॥
नानक तिनहि निरंजनु जानिआ ॥ ३ ॥
गुर प्रसादि आपन आपु सुझै ॥

हे मेरे मन यह सच्चा व्यवहार कर ।
निर्मल जिह्वा से अमृत पान कर ।
इस प्रकार अपने मन को सदा सुखी कर ले ।
नेत्रों से परमेश्वर रंग को देख ।
साधु-संगति कर, जिससे सब कुसंगादि नाश हो जाय ।
चरणों कर गोबिन्द प्राप्ति के मार्ग में चल ।
क्षण मात्र में हरि नाम जपने से पाप मिट जाते हैं ।
हाथों से हरि-प्राप्ति का कर्म कर और कानों से हरि-कथा
श्रवण कर ।
हे नानक ! तेरा मस्तक हरि-लोक में उजला होगा । २ ॥
वह जन संसार में वड़-भागी हैं।
जो सर्वदा वाहिगुरु-गुण गाते हैं।
जो राम-नाम का विचार करते हैं,
सो संसार में बलवान गिने जाते हैं
जो मन, तन और मुख से हरिनाम उच्चारण करते हैं।
वह प्रधान हैं
और उन को ही सर्वदा सुखी जानो
जो सदा केवल एक परमेश्वर को पहिचानता है
वह लोक परलोक की सूझ रखता है
जिस का मन नाम में दृढ़ हो गया है,
हे नानक ! उसी ने निरञ्जन को जान लिया है ॥ ३॥
गुरु कृपा कर जिस को अपना आप दृष्टि में आया है,

तिसकी जानहु तृसना बुझै ॥
साध संगि हरि हरि जसु कहत ॥
सरब रोग ते ओहु हरि जनु रहत ॥
अनदिनु कीरतनु केवलु बख्यानु ॥
गृहसत महि सोई निरबानु ॥
एक ऊपरि जिसु जन की आसा ॥
तिसकी कटीऐ जम की फासा ॥
पारब्रहम की जिसु मनि भूख ॥
नानक तिसहि न लागै दूख ॥ ४ ॥
जिस कउ हरि प्रभु मनि चिति आवै ॥
सो संतु सुहेला नहीं डुलावै ॥
जिसु प्रभु अपुना किरपा करै ॥
सा सेवकु कहु किसते डरै ॥
जैसा सा तैसा द्रिसटाइआ ॥
अपुने कारज महि आपि समाइआ ॥
सोधत सोधत सोधत सीझिआ ॥
गुर प्रसादि ततु सभु बूझिआ ॥
जब देखउ तब सभ किछु मूलु ॥
नानक सो सूखमु सोई असथूलु ॥ ५ ॥
नह किछु जनमै नह किछु मरै ॥
आपन चलितु आप ही करै ॥

निश्चै करो कि उस की तृष्णा शांत हो गई है।
जो साधु-संगति में मिल कर हरि-यश करता है।
सो हरि-जन सब रोगों से रहित है।
जो हर रोज़ केवल हरि-कीर्तन का व्याख्यान करता है,
सो गृहस्थ में रहिता हुआ भी निर्वाण है।
जिस पुरुष की आशा एक-परमेश्वर पर है।
उस की यम फांसी कट कट जाती है।
जिस के मन में केवल पारब्रह्म की ही भूख है,
हे नानक ! उस को दुःख नहीं लगते ॥ ४ ॥
जिस को हरि प्रभु मन में याद आता है,
सो सुखी संत है और डोलता नहीं।
जिस पर अपना प्रभु कृपा करता है,
कहो सो सेवक किस से भय करे ?
उस को जैसा प्रभु था वैसा दृष्टि में आया है।
उस को परमेश्वर अपनी सब सृष्टि में आप समाया हुआ दीखता है।
उस ने पुनः पुनः विचार करने से निश्चय किया है,
और गुरु-कृपा से तत्व स्वरूप को समझ लिया है।
जब मैं देखता हूँ तब सब कुछ वाहिगुरू ही दृष्टि में आता है।
हे नानक ! सो वाहिगुरू ही निर्गुण और सगुण स्वरूप है ॥ ५ ॥
न कछु जन्मता है न कछु मरता है।
प्रभु अपने चरित्र आप करता है।

आवनु जावनु द्रसटि अनद्रसटि ॥
आगिआकारी धारी सभ स्रसटि ॥
आपे आपि सगल महि आपि ॥
अनिक जुगति रचि थापि उथापि ।
अबिनासी नाही किछु खंड ॥
धारण धारि रहिओ ब्रहमंड ॥
अलख अभेव पुरख परताप ॥
आपि जपाए त नानक जाप ॥ ६ ॥

जिन प्रभु जाता सु सोभावंत ॥
सगल संसारु उधरै तिन मंत ॥
प्रभ के सेवक सगल उधारन ॥
प्रभ के सेवक दूख बिसारन ॥
आपे मेलि लए किरपाल ॥
गुर का सबदु जपि भए निहाल ॥'
उन की सेवा सोई लागै ॥
जिस नो क्रिपा करहि बडभागै ॥
नामु जपत पावहि बिस्रामु ॥
नानक तिन पुरख कउ ऊतम करि मानु ॥ ७ ॥

आना जाना दृष्ट और अदृष्ट रूप

सब सृष्टि प्रभु ने अपनी आज्ञा-कर धारण की है।

आप ही आप है और सब में व्यापक आप है !

अनेक युक्तियों से रचना को रच के बनाता और नाश करता है

परन्तु स्वयं अविनाशी है अतएव उसका कुछ (खंड) टुकड़ा नही।

सब ब्रह्मण्ड की सृष्टि को धार रहा है।

उन पूर्ण पुरुष का प्रताप लखा नहीं जाता, और भद भी नहीं पाया जाता।

हे -नानक ! यदि प्रभु आप अपना नाम किसी को जपाय तब जपा जाता है ॥ ६ ॥

जिन्हों ने प्रभु को जाना है सो सोभा वाले हैं।

उन के उपदेश से सब संसार का उद्धार होता है।

प्रभु-सेवक सब का उद्धार करने वाले हैं,

प्रभु-सेवक दुःखों को दूर करन वाले है,

(क्योंकि) अपने सेवकों को; परमेश्वर, जो कृपालु है, आप मिला लेता है।

(हरि सेवक) गुरू उपदेश को.जप जप कर सब दुःखों से रहित हुए हैं।

उन सेवकों की सेवा में वही लगता है,

जिस बड़भागी पर प्रभु स्वयं कृपा करता है।

नाम-जप कर जिन्हों ने विश्राम पाया है,

हे नानक ! उन पुरुषों को उत्तम कर के मानो ॥ ७ ॥

जो किछु करै सु प्रभ कै रंगि ॥
सदा सदा बसै हरि संगि ॥
सहज सुभाइ होवै सो होइ ॥
करणै हारु पछाणै सोइ ॥
प्रभ का कीआ जन मीठ लगाना ॥
जैसा सा तैसा द्रिसटाना ॥
जिसते उपजे तिस माहि समाए ॥
ओइ सुख निधान उनहू बनि आए ॥
आपस कउ आपि दीनो मानु ॥
नानक प्रभ जनु एको जानु ॥ ८ ॥ १४ ॥

सलोकु

सरब कला भरपूर प्रभ बिरथा जाननहार ॥
जाकै सिमरनि उधरीऐ नानक तिसु बलिहार ॥ ३ ॥

असटपदी ॥

टूटी गाढनहार गोपाल ॥
सरब जीआ आपे प्रतिपाल ॥
सगल की चिंता जिसु मन माहि ॥
तिसते बिरथा कोई नाहि

(भक्तजन) जो कुछ करता है सो अपने प्रभु के रंग में करता है।

सो सदा प्रभु के संग, बसता है।

स्वभाविक जो कुछ होता है सो होता है (भाव भक्त उस को प्रभू की रज़ा समझता है)।

करनहार परमेश्वर को ही पहचानता है।

प्रभु का किया भक्तजनों को मीठा लगे है,

क्योंकि उस ने परमेश्वर को जैसा सो (सर्वव्यपक) है वैसा देखा है।

यह भक्तजन जिस परमेश्वर से उत्पन्न होते हैं, उसी में लवलीन हो जाते हैं।

सो (सुखनिधान) परमेश्वर उन भक्तजनों से ही बन आता भाव प्राप्त होता है।

प्रभु अपने आप को आप मान देता है।

हे नानक! प्रभू और प्रभू-जन को एक समझो ॥ ८ ॥ १४ ॥

सलोकु

सर्व शक्तियों से प्रभु पूर्ण है और सब पीड़ा का जानने वाला है।

जिस के स्मरण से उद्धार हो, श्री सतगुरू जो कहते हैं हम उस पर बलिहार जाते हैं।

असटपदी ॥

टूटी हुई को गांठने वाला स्वयं परमेश्वर ही है,

जो सब जीवों को स्वयं पालन करता है।

जिस के मन में सब सृष्टि की चिन्ता है,

उस परमेश्वर से खाली कोई नहीं रह सकता है।

रे मन मेरे सदा हरि जापि ॥
अबिनासी प्रभु आपे आपि ॥
आपन कीआ कछू न होइ ॥
जे सउ प्राणी लोचै कोइ ॥
तिसु बिनु नाही तेरै किछु काम ॥
गति नानक जपि एकु हरि नामु ॥ १ ॥
रूपवंतु होइ नाही मोहै ॥

प्रभ की जोति सगल घट सोहै ॥
धनवंता होइ किआ को गरबै ॥
जा सभु किछु तिसका दीआ दरबै ॥
अति सूरा जा कोऊ कहावै ॥

प्रभ की कला बिना कह धावै ॥
जे को होइ बहै दातारु ॥
तिसु देनहारु जानै गावारु ॥

जिसु गुर प्रसादि तूटै हउ रोगु ॥
नानक सो जनु सदा अरोगु ॥ २ ॥
जिउ मंदर कउ थामै थम्हनु ॥
तिउ गुर का सबदु मनहि असथंमनु ॥
जिउ पाखाणु नाव चड़ि तरै ॥
प्राणी गुर चरण लगत निसतरै ॥

हे मेरे मन तूं सदा हरी को जप।

सो प्रभु अविनाशी और स्वयं प्रकाश है।

जीव का अपना किया कुछ नहीं होता,

कदि कोई प्राणी सौ वार भी चाहे।

हे जीव! प्रभु विना और कोई पदार्थ तेरे काम नही।

हे नानक! एक हरि-नाम जपने से मुक्ति प्राप्त होगी ॥१॥

कोई रूपवान हो कर अपने रूप का अभिमान न करे।

प्रभु की ज्योति ही सब घटों में शोभा दे रही है।

धनवान हो कर कोई क्या अहंकार कर सकता है,

जब सब पदार्थ उस प्रभु के दिये हैं।

यदि कोई अपने आप को बहुत बहादुर कहाये (तब किस काम?)

(क्योंकि) प्रभु-शक्ति विना किस पर धावा कर सकता है।

यदि कोई दाता बन बैठे,

तब उस मूढ़ को उचित है कि अपने देने वाले प्रभु को ही दाता समझे।

सत्गुरू की कृपा जिस का अहंता रूप रोग नाश हो,

हे नानक! सो जन सर्वदा निरोग है ॥२॥

जैसे मंदिर को खम्भा थामता है,

वैसे गुरू का शब्द (चंचल) मन को थामता है।

जैसे पत्थर नौका पर चढ़ के तरता है

वैसे प्राणी गुरू-चरणों में लग कर मुक्त होता है

जिउ अंधकार दीप परगासु ॥
गुर दरसनु देखि मनि होइ बिगासु ॥
जिउ महा उदिआन महि मारगु पावै ॥
तिउ साधू संगि मिलि जोति प्रगटावै ॥
तिन संतन की बाछउ धूरि ॥
नानक की हरि लोचा पूरि ॥ ३ ॥
मन मूरख काहे बिललाईऐ ॥
पुरब लिखे का लिखिआ पाईऐ ॥
दूख सूख प्रभ देवन हारु ॥
अवर तिआगि तू तिसहि चितारु ॥

जो किछु करै सोई सुखु मानु ॥
भूला काहे फिरहि अजान ॥
कउन बसतु आई तेरै संग ॥
लपटि रहिओ रस लोभी पतंग ॥
राम नाम जपि हिरदे माहि ॥
नानक पति सेती घरि जाहि ॥ ४ ॥
जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥
राम नामु संतन घरि पाइआ ॥
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि ॥
राम नामु हिरदे महि तोलि ॥
लादि खेप संतह संगि चालु ॥

जैसे अन्धेरे में दीपक का प्रकाश होता है,

वैसे गुरू का दर्शन करने से मन प्रफुल्लित होता है।

जैसे कोई भूला हुआ महा उद्यान में मार्ग पा कर प्रसन्न होता है,

वैसे साधु-संगति मिलने से ज्योतिस्वरूप प्रकट होता है।

मै उन सन्तों की धूलि को मांगाता हूँ।

श्री सत् गुरू जी कहते हैं, हे वाहिगुरू ! यह इच्छा पूर्ण करो। ३

हे मूढ़ मन क्यों विलाप करिये,

जब सब कुछ प्रारब्धानुसार ही पाना है।

(कर्मानुसार) दुःख सुख देने वाला प्रभु है,

अतएव और सब का परित्याग करके तू उस प्रभु को याद कर।

जो कछु प्रभु करे तू उस को सुख कर के मान;।

हे अजान क्यों भूला फिरता है ?

तेरे संग कौन वस्तु आई थी ?

हे लोभी पतंग सम इन रसों में क्यों फंस रहा है ?

हृदय में केवल राम नाम जप।

हे नानक ! इस तरह मान पूर्वक अपने घर को जा॥ ४॥

जिस सौदे को तूं लेने के लिये आया है सो, राम-नाम-रूप सौदा संतों के घर में पाया जाता है।

अभिमान को त्याग के मन समर्पण कर इस मूल्य से उस सौदे को मोल ले, पुनः राम-नाम का हृदय में विचार कर।

इस खेप को लाद कर सन्तों के संग चल।

अवर तिआगि बिखिआ जंजाल ॥
धंनि धंनि कहै सभु कोइ ॥
मुख ऊजल हरि दरगह सोइ ॥
इहु वापारु विरला वापारै ॥
नानक ताकै सद बलिहारै ॥ ५ ॥

चरन साध के धोइ धोइ पीउ ॥
अरपि साध कउ अपना जीउ ॥
साध की धूरि करहु इसनानु ॥
साध ऊपरि जाईऐ कुरबानु ॥
साध सेवा वडभागी पाईऐ ॥
साध संगि हरि कीरतनु गाईऐ ॥
अनिक बिघन ते साधू राखै ॥
हरि गुन गाइ अंमृत रसु चाखै ॥
ओट गही संतह दरि आइआ ॥
सरब सूख नानक तिह पाइआ ॥ ६ ॥
मिरतक कउ जीवालनहार ॥
भूखे कउ देवत आधार ॥
सरब निधान जाकी दसटी माहि ॥
पुरब लिखे का लहणा पाहि ॥
सभु किछु तिसका ओहु करनै जोगु ॥
तिसु बिनु दूसर होआ न होगु ॥

माया के और सब झगड़े त्याग दे ।
तब तुम को सब कोई धन्य धन्य कहेगा ।
हरि लोक में उज्जल-मुख और शोभा होगी ।
इस व्यवहार का कोई उत्तम व्यापारी व्यपाह करता है ।
श्री सतगुरू जी कहते हैं हम उस पर सर्वदा बलिहार जा ते
हैं ॥ ५ ॥
साधु के चरण धो धो के पान कर ।
अपना मन साधु को समर्पण कर ।
साधु की धूलि में स्नान कर ।
साधु पर कुर्बान जाईये ।
साधु सेवा बड़े भागों कर प्राप्त होती है ।
साधु संग में हरि-कीर्तन गाईता है ।
अनेक विघ्नों से साधु बचा लेता है ।
उन के संग में हरि-गुण गा कर अमृत रस चक्खा जाता है ।
जिस ने संतों की ओट ली और द्वार पर आ पड़ा,
हे नानक ! सब सुख उसको प्राप्त हुये हैं ॥ ६ ॥
प्रभु मृतक को (आत्मिक) जिन्दगी देने वाला है,
और भूखे को आधार देता है ।
सब पदार्थों के भण्डार जिस की दृष्टि में हैं ।
जिस से जीव पूर्व लिखे अनुसार लेते हैं ।
सब कुछ उस का है और वह करने को समर्थ है,
उस के बिना दूसरा ना कोई हुआ है और ना होगा ।

जपि जन सदा सदा दिनु रैणी ॥
सभ ते ऊच निरमल इह करणी ॥
करि किरपा जिस कउ नामु दीआ ॥
नानक सो जनु निरमलु थीआ ॥ ७ ॥
जाकै मनि गुर की परतीति ॥
तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति ॥
भगतु भगतु सुनीऐ तिहु लोइ ॥
जाकै हिरदै एको होइ ॥
सचु करणी सचु ताकी रहत ॥
सचु हिरदै सति मुखि कहत ॥
साची द्रसटि साचा आकारु ॥
सचु वरतै साचा पासारु ॥
पारब्रहम जिनि सचु करि जाता ॥
नानक सो जनु सचि समाता ॥ ८ ॥ १५ ॥

सलोकु

रूपु न रेख न रंगु किछु त्रिहु गुण ते प्रभ भिंन ॥
तिसहि बुझाए नानका जिसु होवै सु प्रसंन ॥ १ ॥

असटपदी ॥

अबिनासी प्रभु मन महि राखु ॥

हे भक्तजन दिन रात प्रभु को जप ।
सब से ऊंची और निर्मल कमाई यह है ।
जिस को प्रभु ने कृपा करके अपना नाम दिया है,
हे नानक ! सो जन निर्मल हुआ है ॥ ७ ॥
जिस के मन में गुरू-वचनों पर विश्वास है,
उस को हरि-प्रभु याद आता है ।
तीन लोकों में वह भक्त भक्त करके सुना जाता है,
जिस के हृदय में एक प्रभु होता है ।
उस की कमाई और रहित सब सच्ची है ।
सत्य स्वरूप वाला ही उसके हृदय में है और मुख से भी सत्य ही कथन करता है ।
सच्ची ही उस की दृष्टि है और सच्चा ही उस का रूप है ।
सत्य में वर्तता है और सत्य ही संसार को जानता है (भाव हर जगह उस को प्रभु ही प्रभु दीखता है) ।
परमेश्वर को जिस ने सत्यरूप कर जान लिया है,
हे नानक ! सो पुरूष सत्य में ही लिवलीन हो जाता है ॥ ८ ॥ १५

सलोकु

जिस का कछु रूप रंग और चिन्ह नहीं सो वाहिगुरू त्रिगुणातीत है ।
हे नानक ! जिस के ऊपर प्रभु प्रसन्न होता है उस को अपना वास्तविक स्वरूप जनाता है ।

असटपदी ॥

हे मन ! अविनाशी प्रभु को मन में धारण कर,

मानुख की तू प्रीति तिआगु ॥
तिसतें परै नाही किछु कोइ ॥
सरब निरंतरि एको सोइ ॥
आपे बीना आपे दाना ॥
गहिर गंभीरु गहीरु सुजाना ॥
पारब्रह्म परमेसुर गोबिंद ॥
कृपा निधान दइआल बखसंद ॥
साध तेरे की चरनी पाउ ॥
नानक कै मनि इहु अनराउ ॥ १ ॥
मनसा पूरन सरना जोगु ॥

जो करि पाइआ सोई होगु ॥
हरन भरन जाका नेत्र फोरु ॥

तिसका मंत्रु न जानै होरु ॥
अनद रूप मंगल सद जाकै ॥
सरब थोक सुनीअहि घरि ताकै ॥
राज महि राजु जोग महि जोगी ॥
तप महि तपीसरु गृहसथ महि भोगी ॥
धिआइ धिआइ भगतह सुखु पाइआ ॥
नानक तिसु पुरख का किनै अंतु न पाइआ ॥ २ ॥
जाकी लीला की मिति नाहि ॥

और मनुष्य-प्रीति को तू त्याग दे।

उस परमेश्वर से परे कछु कोई वस्तु नहीं है।

सब से निरन्तर सो एक ही है।

स्वयं ही पहिचानने वाला और स्वयं ही जानने वाला है।

गहिर गम्भीर व्यापक और सुजान है।

पारब्रह्म परमेश्वर और गोविन्द है।

कृपा निधान दयालु और क्षमा करने वाला है।

हे प्रभो मैं तुमरे साधु के चरणों पर पड़ूं।

श्री जगत् गुरु जी कहते हैं मेरे मन मे यह प्रेम है ॥ १ ॥

प्रभु मन की इच्छा पूर्ण करने वाला व शरण पड़े की सहायता करने वाला है।

जो उस ने जीव के हाथ में दिया है सो होगा।

जिस के एक निमष मात्र में सृष्टि का संहार और उत्पत्ति होती है,

उस के मन्त्र भाव विचार को उस के बिना कोई दूसरा नहीं जानता।

स्वयं आनन्द-स्वरूप है और उस के घर में सदा मंगल हैं।

उस के घर सब पदार्थ सुनने में आये हैं।

वह राजों में राजा और योगियों में योगी है।

तपस्वियों में तपस्वी और गृहस्थों में गृहस्थी है।

भक्त जनों ने उसका ध्यान धर के सुख पाया है।

हे नानक ! उस वाहिगुरू का किसी ने अन्त नहीं पाया ॥ २ ॥

जिसकी लीला का अन्त नहीं है।

सगल देव हारे अवगाहि ॥
पिता का जनमु कि जानै पूतु ॥
सगल परोई अपुनै सूति ॥
सुमति गिआनु धिआनु जिन देइ ॥
जन दास नामु धिआवहि सेइ ॥
तिहु गुण महि जा कउ भरमाए
जनमि मरै फिरि आवै जाए ॥
ऊच नीच तिस के असथान ॥
जैसा जनावै तैसा नानक जान ॥ ३ ॥
नाना रूप नाना जाके रंग ॥
नाना भेख करहि इक रंग ॥
नाना बिधि कीनो बिसथारु ॥
प्रभु अबिनासी एकंकारु ॥
नाना चलित करे खिन माहि ॥
पूरि रहिओ पूरनु सभ ठाइ ॥
नाना बिधि करि बनत बनाई ॥
अपनी कीमति आपे पाई ॥
सभ घट तिस के सभ तिस के नाउ ॥
जपि जपि जीवै नानक हरि नाउ ॥ ४ ॥
नाम के धारे सगले जंत ॥
नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥

जिस का अन्त लेते हुये सब देवते थकित हुए हैं।

पिता-जन्म को पुत्र क्या जान सकता है ?

सब सृष्टि प्रभु ने अपने सूत में परोई है।

सुमति-ज्ञान और ध्यान जिन को प्रभु देता है ?

ऐसे जो भक्त जन उसके नाम को ध्याते हैं।

जिस को तीन गुणों में भ्रमाता है।

सो जन्म कर आता है और मर कर जाता है।

ऊंच नीच आदि स्थान उस के रचे हुए हैं।

हे नानक ! जैसा जिस को जनाता है वैसा कोई जानता है ॥ ३ ॥

अनेक रूप और अनेक जिस के रंग हैं,

वह अनेक वेष करता हुआ पुनः एक रंग मे रहता है :

अनेक प्रकार का विस्तार जिस ने किया है,

सो प्रभु अविनाशी और एकंकार मात्र एक रस है।

अनेक चरित्र क्षण में करता है।

सो पूर्ण प्रभु सब स्थानों में पूर्ण हो रहा है।

अनेक युक्तियों से संसार का जिस ने रचना बनाई है,

अपनी कीमत (बड़ाई) आप ही जानता है।

सब घट और सब स्थान उस के हैं।

हे नानक ! जीव उस का नाम जप कर जीता है (अर्थात् जीवन प्राप्त करता है) ॥ ४ ॥

सब जन्तु नाम (सर्व व्यापक ईश्वर) के आधार (आश्रय) हैं।

सब खंड और ब्रह्माण्ड नाम के आश्रय हैं।

नाम के धारे सिमृति बेद पुरान ॥
नाम के धारे सुनन गिआन धिआन ॥
नाम के धारे आगास पाताल ॥
नाम के धारे सगल आकार ॥
नाम के धारे पुरीआ सभ भवन ॥
नाम कै संगि उधरे सुनि स्रवन ॥

करि किरपा जिसु आपनै नामि लाए ॥
नानक चउथे पद महि सो जनु गति पाए॥ ५ ॥
रूपु सति जाका सति असथानु ॥
पुरखु सति केवल परधानु ॥
करतूति सति सति जाकी बाणी ॥
सति पुरखु सभ माहि समाणी ॥
सति करमु जाकी रचना सति ॥
मूलु सति सति उतपति ॥
सति करणी निरमल निरमली ॥
जिसहि बुझाए तिसहि सभ भली ॥

सतिनामु प्रभ का सुखदाई ॥
बिस्वासु सति नानक गुर ते पाई ॥ ६ ॥
सति बचन साधू उपदेस ॥
सति ते जन जाकै रिदै प्रवेस ॥

वेद पुराण व स्मृतियां आदि धर्म्म पुस्तक नाम-आधार पर है।

सुनना, ज्ञान और ध्यान सब नाम के आश्रय हैं।

आकाश और पाताल सब नाम के आधार पर हैं।

सब स्वरूप नाम के आधार पर हैं।

सब पुरियां और लोक नाम के आश्रय हैं।

कानों स सुन कर नाम के सग से जीव संसार समुद्र से तर गये हैं।

वाहिगुरू कृपा करके जिस को अपने नाम में लगाये,

हे नानक ! चतुर्थप द में जा कर सो पुरुष मुक्ति पाता है ॥ ५ ॥

जिस का रूप और स्थान सत्य है।

सो सत्य पुरुष ही केवल प्रधान है।

जिस की (करतूत) करणी और बाणी सत्य है,

सो सत्य पुरुष सब में समा रहा है।

जिसका कर्म और रचना भी सत्य है,

सो कारण रूप से और कार्यरूप से भी सत्य है।

जिस की करणी सत्य है और जो निर्मल से निर्मल है,

वह प्रभु जिस जीव को सुभाता है, उस जीव को सब भली प्रतीति होती है।

ऐसे प्रभु का सति-नाम सुखदाई है।

हे नानक ! यह सत्य विश्वास सतगुरू से प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

साधु का उपदेश ही सत्य वचन है।

सो पुरुष सत्य है जिसके हृदय में सत्य का प्रवेश है ॥

सति निरति बूझै जे कोइ ॥
नामु जपत ताको गति होइ ॥
आपि सति कीआ सभु सति ॥
आपे जानै अपनी मिति गति ॥
जिसकी स्रसटि सु करनैहारु ॥
अवर न बूझि करत बीचारु ॥
करते की मिति न जानै कीआ ॥
नानक जो तिसु भावै सो वरतीआ ॥ ७ ॥
बिसमन बिसम भए बिसमाद ॥
जिनि बूझिआ तिसु आइआ स्वाद ॥
प्रभ कै रंगि राचि जन रहे ॥
गुर कै बचनि पदारथ लहे ॥
ओइ दाते दुख काटन हार ॥
जा कै संगि तरै संसार ।
जन का सेवकु सो वडभागी ॥
जन कै संगि एक लिव लागी ॥
गुन गोबिंदु कीरतनु जनु गावै ॥
गुर प्रसादि नानक फलु पावै ॥ ८ ॥ १६ ॥

सलोकु

आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भि सचु नानक होसी भि सचु ॥ १ ॥

यदि कोई सत्य को निर्णय करके समझ ले,

तब नाम जप कर उस की गति होती है।

स्वयं प्रभु सत्य है उस की रचना भी सब सत्य स्वरूप है।

सो वाहिगुरू अपनी मर्य्यादा और गति को स्वयं ही जानता है।

जिस की यह सृष्टि है सो स्वयं ही करने वाला है।

और कोई उसको समझ नहीं सकता यदि विचार भी करे।

कर्ता की मर्यादा को किया हुआ (जीव) नहीं जानता।

हे नानक ! जो प्रभु को भाता है सो वर्तता है ॥ ७ ॥

जीव बहुत ज़्यादा आश्चर्य और हैरान हुये हैं,
(परन्तु) जिसने उसी को समझा है उसीको आनन्द आया।

सो जन प्रभु-रंग में राच रहे हैं।

गुरू-वचन द्वारा उन्हों ने नाम-पदार्थ पाया है।

वह औरों को भी नाम की दात देकर दुःख काटने वाले हैं।

जिन के संग लग कर संसार तरता है।

जो ऐसे भक्तजनों का सेवक है सो बड़भागी है।

ऐसे भक्तजनों के संग से एक रस लिव लगती है।

पुनः वह सेवक गोविन्द-गुण और कीर्तन को गाता है।

श्री सतगुरू जी कहते हैं सतगुरू-कृपा से मुक्ति रूप फल पाता है ॥ ८ ॥ १६ ॥

सलोकु

वाहिगुरू आदि मे सत्य था। युगों के आदि में भी सत्य था।
अब भी सत्य है। हे नानक ! आगे भी सत्य होगा।

असटपदी ॥

चरन सति सति परसन हार ॥
पूजा सति सति सेवदार ॥
दरसनु सति सति पेखनहार ॥
नामु सति सति धिआवनहार ॥
आपि सति सति सभ धारी ॥
आपे गुण आपे गुणकारी ॥
सबदु सति सति प्रभु बकता ॥
सुरति सति सति जसु सुनता ॥
बुझनहार कउ सति सभ होइ ॥
नानक सति सति प्रभु सोइ ॥ १ ॥
सति सरुपु रिदै जिनि मानिआ ॥
करन करावन तिनि मूलु पछानिआ ॥
जा कै रिदै बिस्वासु प्रभ आइआ ॥
ततु गिआनु तिसु मन प्रगटाइआ ॥
भै ते निरभउ होइ बसाना ॥
जिस ते उपजिआ तिसु माहि समाना ॥
बसतु माहि ले बसत गडाई ॥
ता कउ भिन न कहना जाई ॥
बूझै बूझनहारु बिबेक ॥

असटपदी ॥

प्रभु के चरण भी सत्य हैं और स्पर्श करने वाले भी सत्य हैं।
हरि पूजा भी सत्य है और सेवा करने वाले भी सत्य हैं।
वाहिगुरू-दर्शन भी सत्य है और दर्शन करने वाले भी सत्य हैं।
गोविन्द-नाम भी सत्य है और ध्याने वाले भी सत्य हैं।
प्रभु स्वयं भी सत्य हैं और सब सृष्टि जो उस ने धारण की है वह भी सत्य है।
स्वय' ही गुण-रूप है और स्वयं ही गुण करने वाला है।
शब्द भी सत्य है और प्रभु-सुयश करने वाला वक्ता भी सत्य है।
ध्यान सत्य है और प्रभु-सुयश श्रवण करने वाला भी सत्य है।
आत्म दर्शी पुरुष के लिए सब सत्य ही है।
हे नानक ! सो प्रभु सर्वदा सत्य ही है ॥ १ ॥
सत्य स्वरूप को जिस ने हृदय में धारण किया है,
उस ने मूल रूप वाहिगुरू को करने और कराने वाला पहचाना है।
जिस के हृदय में प्रभु-विश्वास आ गया है,
उसके मन में तत्व ज्ञान प्रकट हुआ है।
भय से निर्भय हो कर सो संसार में बसता है।
जिस से वह उत्पन्न हुआ था उस में लिव-लीन हो गया है।
एक वस्तु में जब वस्तु मिला दी गई,
तब उस को उस से भिन्न नहीं कहा जाता।
इस बात को ज्ञान द्वारा समझने वाला समझता है;

नाराइन मिले नानक एक ॥ २ ॥
ठाकुर का सेवकु आगिआकारी ॥
ठाकुर का सेवकु सदा पूजारी ॥
ठाकुर के सेवक कै मन परतीति ॥
ठाकुर के सेवक की निरमल रीति ॥
ठाकुर कउ सेवकु जानै संगि ॥
प्रभ का सेवकु नाम कै रंगि ॥
सेवक कउ प्रभ पालनहारा ॥
सेवक की राखै निरंकारा ॥
सो सेवकु जिसु दइआ प्रभु धारै ॥
नानक सो सेवकु सासि सासि समारै ॥ ३ ॥
अपुने जन का परदा ढाकै ॥
अपुने सेवक की सरपर राखै ॥
अपने दास कउ देइ वडाई ।
अपने सेवक कउ नाम जपाई ॥
अपने सेवक की आपि पति राखै ॥
ता की गति मिति कोइ न लाखै ॥
प्रभ के सेवक कउ को न पहूचै ॥
प्रभ के सेवक ऊच ते ऊचे ॥
जो प्रभि अपनी सेवा लाइआ ॥
नानक सो सेवकु दहदिसि प्रगटाइआ ॥ ४ ॥

हे नानक ! वह एक नारायण में मिले हैं ॥ २ ॥

प्रभु का सेवक प्रभु-आज्ञा में चलता है।
वाहिगुरू का सेवक सदा उस की पूजा में रहता है।
ठाकुर के सेवक के मन में पूर्ण प्रतीति होती है।
वाहिगुरू के सेवक की रीति अति निर्मल होती है।
गोविन्द का सेवक गोविन्द को संग जानता है।
वाहिगुरू का सेवक सदा नाम रंग में रंगा है।
ऐसे सेवक का पालक स्वयं प्रभु है।
सेवक की लज्जा निरंकार स्वयं रखता है।
सेवक सो है जिस पर स्वयं प्रभु कृपा करता है।
हे नानक ! सो सेवक श्वास श्वास प्रभु-स्मरण करे है ॥ ३ ॥

वाहिगुरू अपने सेवक का पड़दा स्वयं ढांकता है।
वाहिगुरू अपने सेवक की लज्जा अवश्य रखता है।
वाहिगुरू अपने सेवक को स्वयं बड़ाई देता है।
वाहिगुरू अपने सेवक से अपना नाम जपाता है।
वाहिगुरू अपने सेवक का मान आप रखता है।
उस वाहिगुरू की गति और मर्य्यादा को कोई जान नहीं सकता।
प्रभु के सेवक की समता कोई नहीं कर सकता।
(कारण कि) प्रभु-सेवक ऊंचे से ऊंचे हैं।
जिस को प्रभु ने अपनी सेवा में लगाया है,
हे नानक ! सो सेवक दशों दिशा में प्रकट हो जाता है ॥ ४ ॥

नीकी कीरी महि कल राखै ॥
भसम करै लसकर कोटि लाखै ॥
जिस का सासु न काढत आपि ॥
ता कउ राखत दे करि हाथ ॥
मानस जतन करत बहु भाति ॥
तिस के करतब बिरथे जाति ॥
मारै न राखै अवरु न कोइ ॥
सरब जीआ का राखा सोइ ॥
काहे सोच करहि रे प्राणी ॥
जपि नानक प्रभ अलख विडाणी ॥ ५ ॥

बारंबार बार प्रभु जपीऐ ॥
पी अंमृतु एहु मनु तनु ध्रपीऐ ॥
नाम रतनु जिनि गुरमुखि पाइआ ॥
तिसु किछु अवरु नाही द्रिसटाइआ ॥
नामु धनु नामो रूपु रंगु ॥
नामो सुखु हरि नाम का संगु ॥
नाम रसि जो जन त्रिपताने ॥
मन तन नामहि नामि समाने ॥
ऊठत बैठत सोवत नाम ॥
कहु नानक जन कै सद काम ॥ ६ ॥
बोलहु जसु जिहबा दिनु राति ॥

यदि प्रभु छोटी सी च्योंटी में अपनी शक्ति रख दे,
तब वह लाखों करोड़ों लशकरों को भस्म कर सकती है।
जिस को वाहिगुरू न मारना चाहे,
उस को हाथ दे कर रख लेता है।
मनुष्य बहुत प्रकार के यत्न करता है,
परन्तु उस के कर्तव्य व्यर्थ जाते हैं।
मारने पुनः रखने वाला और कोई नहीं है।
सब जीवों का रक्षक स्वयं वाहिगुरू ही है।
हे प्राणी तू चिन्ता क्यों करता है ?
श्री जगत् गुरू जी कहते हैं, अलेख और आश्चर्य प्रभु को जप ॥ ५ ॥
वारंवार भाव सर्वदा प्रभु को जपिए।
यह अमृत पान कर मन और तनु को तृप्त करिए।
नाम रत्न जिस गुरुमुख ने पाया है,
उस को प्रभु के सिवाय और कछु भी दृष्टि नहीं आता।
नाम ही उस का धन, रूप और रंग है।
नाम ही उस का सुख और हरि-नाम ही उस का संगी है।
नाम रस में जो पुरुष तृप्त हुए हैं,
सो मन और तनु कर नाम ही नाम में समाय हैं।
वह ऊठत वैठत और सोवत नाम ही जपते हैं।
हे नानक! भक्तजनों के लिए सर्वदा यही काम है ॥ ६ ॥
दिन रात जिह्वा पर वाहिगुरू सुयश का उचारण करो।

प्रभि अपनै जन कीनी दाति ॥
करहि भगति आतम कै चाइ ॥

प्रभ अपने सिउ रहहि समाइ ॥
जो होआ होवत सो जानै ॥
प्रभ अपने का हुकमु पछानै ॥
तिस की महिमा कउन वखानउ ॥
तिस का गुनु कहि एक न जानउ ॥
आठ पहर प्रभ बसहि हजूरे ॥
कहु नानक सेई जन पूरे ॥ ७ ॥
मन मेरे तिन की ओट लेहि ॥
मनु तनु अपना तिन जन देहि ॥
जिनि जनि अपना प्रभू पछाता ॥
सो जनु सरब थोक का दाता ॥
तिसकी सरनि सरब सुख पावहि ॥
तिसकै दरसि सभ पाप मिटावहि ॥
अवर सिआनप सगली छाडु ॥
तिसु जन की तू सेवा लागु ॥
आवनु जानु न होवी तेरा ॥
नानक तिसु जन के पूजहु सद पैरा ॥ ८ ॥ १७ ॥

यह दात प्रभु ने अपने दास पर की है।

गुरुमुख पुरुष मन की प्रसन्नता पूर्वक वाहिगुरू की भक्ति -करते हैं।

भक्तजन अपने प्रभु संग समाया रहता है।

जो कुछ हुआ है उस को होनहार जानता है,

और अपने प्रभु की आज्ञा पहचानता है।

मैं उस वाहिगुरू की महिमा को कैसे वर्णन करूँ।

उस का एक गुण भी मैं वर्णन नहीं कर सकता।

जो सदा प्रभु के हजूर बसते हैं,

कहो हे नानक! सो पूर्ण पुरुष हैं॥ ७ ॥

हे मेरे मन उन महापुरुषों की ओट ले।

मन और तन उन को समर्पण कर।

जिन जनों ने अपना प्रभु पहिचान लिया है,

सो जन सब पदार्थों के दाता अर्थात् सर्व-स्मर्थ हो जाते हैं।

(हे मन !) उस जन की शरण में सब सुख पायेगा।

उस के दर्शन से तूं अपने सब पाप मिटायेगा।

और सब चतुरता को तूं त्याग।

पुनः उस महापुरुष की सेवा में तूं तत्पर हो,

इस तरह तब तुम्हारा आना जाना नहीं होगा।

हे नानक! उस महापुरुष के चरणों की सर्वदा पूजा करो॥

८॥ १७॥

सलोकु

सति पुरखु जिनि जानिआ सतिगुरु तिस का नाउ ॥
तिसकै संगि सिखु उधरै नानक हरि गुन गाउ ॥ १ ॥

असटपदी

सतिगुरु सिख की करै प्रतिपाल ॥
सेवक कउ गुरू सदा दइआल ॥
सिख की गुरु दुरमति मलु हिरै ॥
गुर बचनी हरि नामु उचरै ॥
सतिगुरु सिख के बंधन काटै ॥
गुर का सिखु बिकार ते हाटै ॥
सतिगुरु सिख कउ नाम धनु देइ ॥
गुर का सिखु वडभागी हे ॥
सतिगुरु सिख का हलतु पलतु सवारै ॥
नानक सतिगुरु सिख कउ जीअ नालि समारै ॥ १ ॥

गुर कै गृहि सेवकु जो रहै ॥
गुर की आगिआ मन महि सहै ॥
आपस कउ करि कछु न जनावै ॥
हरि हरि नामु रिदै सद धिआवै ॥
मनु बेचै सतिगुर कै पासि ॥

सलोकु

जिस ने सत्य-स्वरूप वाहिगुरू को जान लिया है उस का नाम सद्गुरु है।

हे नानक ! उन के संग में हरिगुण गा कर शिष्य का उद्धार होता है॥

असटपदि

सतगुरू शिष्य का पालन करता है।

सतगुरू अपने सेवक पर दयालु रहता है।

सतगुरू अपने शिष्य की दुर्मत रूपी मल को विनष्ट करता है।

वह शिष्य सत् गुरू वचन द्वारा हरि नाम का उच्चारण करता है।

सतगुरू अपने शिष्य के बन्धन को काट देता है और सतगुरु का शिष्य विकारों को त्याग देता है।

सतगुरू अपने शिष्य को नामधन देता है।

सतगुरू का शिष्य बड़भागी है।

सतगुरू अपने शिष्य का लोक और परलोक सुधारता है।

हे नानक ! सतगुरू अपने शिष्य को सदा हृदय में याद रखता है॥ १॥

जो सेवक गुरू-गृह में रहता है।

(भाव) गुरू आज्ञा का पालन करता है।

अपने आप को कछु करके नहीं जानता है।

सदा वाहिगुरू नाम का हृदय में ध्यान करता है।

अपना मन सतगुरू के अर्पण करता है।

तिसु सेवकु के कारज रासि ॥
सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥
अपनी कृपा जिसु आपि करेइ ॥
नानक सो सेवकु गुर की मति लेइ ॥ २ ॥
बीस बिसवे गुर का मनु मानै ॥
सो सेवकु परमेसुर की गति जानै ॥
सो सतिगुरु जिसु रिदै हरिनाउ ॥
अनिक बार गुर कउ बलि जाउ ॥
सरब निधान जीअ का दाता ॥
आठ पहर पारब्रहम रंगि राता ॥
ब्रहम महि जनु जन माहि पारब्रहमु ॥
एकहि आपि नही कछु भरमु ॥
सहस सिआनप लइआ न जाईऐ ॥
नानक ऐसा गुरु बडभागी पाईऐ ॥ ३ ॥
सफल दरसनु पेखत पुनीत ॥
परसत चरन गति निरमल रीति ॥
भेटत संगि राम गुन रवे ॥
पारब्रहम की दरगह गवे ॥
सुनि करि बचन करन आघाने ॥

उस सेवक के सब कार्य्य पूर्ण होते हैं।

फल की इच्छा से रहित हो कर जो सेवा करता है,

उस को स्वामी वाहिगुरू प्राप्त होता है।

वाहिगुरू अपनी कृपा जिस पर स्वयं करे,

हे नानक ! सो सेवक गुरु-शिक्षा को लेता है॥ २॥

जिस शिष्य पर गुरू का मन (बीस बिसवे) पूरी तौर से मान जाय,

सो सेवक परमेश्वर-गति को जानता है।

सतगुरू सो है जिस के हृदय में वाहिगुरू नाम है।

ऐसे सतगुरु पर मैं अनेक बार बलिहार जाता हूँ।

सो सतगुरू सर्व निधान और जीवन का दाता है।

जो आठों पहर पार-ब्रह्म के रंग में रंगा रहता है।

प्रभु में उस सा सेवक और सेवक में प्रभु लीन है।

दोनों ओर एक आप ही आप है इस मे कछु भ्रम नहीं है

हजारों चतुराईयां करने पर भी सतगुरु प्राप्त नही होता।

हे नानक ! ऐसा सतगुरू बड़े भागों से प्राप्त होता है॥ ३॥

सतगुरू का दर्शन सफल है, दर्शन मात्र से (जीव) पवित्र हो जाता है।

चरण-स्पर्श करने से मुक्ति की निर्मल युक्ति प्राप्त होती है।

सतगुरू के संग मे मिल कर जिस ने राम गुण गाये हैं,

सो पारब्रह्म-लोक में प्राप्त होता है।

पूर्ण गुरू के वचन सुन कर कान तृप्त हो गये।

मनि संतोखु आतम पतीआने ॥
पूरा गुरु अख्यउ जा का मंत्र ॥
अंमृत द्रसटि पेखै होइ संत ॥
गुण बिअंत कीमति नही पाइ ॥
नानक जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥ ४ ॥

जिहवा एक उसतति अनेक ॥

सति पुरखु पूरन बिबेक ॥

काहू बोल न पहुचत प्रानी ॥
अगम अगोचर प्रभ निरबानी ॥

निराहार निरवैर सुखदाई ॥
ता की कीमति किनै न पाई ॥
अनिक भगत बंदन नित करहि ॥
चरन कमल हिरदै सिमरहि ॥
सदा बलिहारी सतिगुर अपने ॥
नानक जिसु प्रसादि ऐसा प्रभु जपने ॥ ५ ॥

इहु हरि रसु पावै जनु कोइ ॥
अंमृतु पीवै अमरु सो होइ ॥
उसु पुरख का नाही कदे बिनास ॥
जा कै मनि प्रगटे गुनतास ॥

पुनः मन में सन्तोष और पूर्ण विश्वास आ गया ।]
सो पूर्ण गुरू हैं जिन का उपदेश अटल है।
जिस की अमृत दृष्टि देखने से यह जीव साधु बन जाय,
ऐसे सत्गुरू के गुण अनन्त हैं और वह अमूल्य है !
हे नानक ! जिस को चाहता है उस को सत्गुरू अपने संग मिला लेता है ॥ ४ ॥
(जीव की) जिह्वा एक है (अनन्त-रूप वाहिगुरू की स्तुति अनन्त है ।
वह प्रभु सत्य है पुरुष (जीवों में व्यापक) है, पूर्ण है और ज्ञान स्वरूप है।
किसी वचनादि करके प्राणी उस को नहीं पहुंच सकता ।
वाहिगुरू अगम्य अगोचर है और वाणी द्वारा उसे तक पहुंचा नहीं जा सकता,
पुनः निराहार निर्वैर और सुखदाई है ।
उस का मूल्य किसी ने भी नहीं पाया ।
अनेक भक्तजन सदा प्रभु को नमस्कार करते हैं ।
और हृदय में चरण कमलों का स्मर्ण करते हैं ।
मैं (ऐसे) अपने सत्गुरू पर सदा बलिहार जाता हूँ ।
जिस (गुरू) की कृपा से कि, श्री सत्गुरू जी कहते हैं, ऐसे प्रभु जपा जाता है ॥ ५ ॥
इस हरि-नाम रस को कोई बड़भागी पुरुष पाता है ।
जो (नाम) अमृत पान करता है सो अमर होता है ।
उस पुरुष का कभी भी विनाश नहीं होता,
जिस के मन में गुणों का समुद्र प्रभु प्रकट हुआ है ।

आठ पहर हरि का नामु लेइ ॥
सचु उपदेसु सेवक कउ देइ ।
मोह माइआ कै संगि न लेपु ॥
मन महि राखै हरि हरि एकु ॥
अंधकार दीपक परगासे ॥
नानक भरम मोह दुख तह ते नासे ॥ ६ ॥

तपति माहि ठाढि वरताई ॥
अनदु भइआ दुख नाठे भाई ॥
जनम मरन के मिटे अंदेसे ॥
साधू के पूरन उपदेसे ॥
भउ चूका निरभउ होइ बसे ॥
सगल बिआधि मन ते खै नसे ॥
जिस का सा तिनि किरपा धारी ॥
साध संगि जपि नामु मुरारी ॥
थिति पाई चूके भ्रम गवन ॥
सुनि नानक हरि हरि जसु स्रवन ॥ ७ ॥

निरगुनु आपि सरगुनु भी ओही ॥
कला धारि जिनि सगली मोही ॥
अपने चरित प्रभि आपि बनाए ॥

जो (गुरु) आठों पहर हरिनाम को लेता है।

अपने सेवक को उपदेश सच्चा देता है।

(जो गुरु) मोह और माया के संग में लंपट नहीं होता,

(जो गुरु) मन में एक वाहिगुरु-नाम को रखता है।

(जो गुरु) अज्ञान रूप अन्धकार में ज्ञान रूप दीपक का प्रकाश करता है।

हे नानक ! उस (गुरु-) द्वारा भ्रम, मोह और दुःख दूर होते हैं ॥ ६ ॥

सत्गुरु ने हमारे संतप्त हृदय को शीतल कर दिया है।

हे भाई ! दुःख नष्ट हो गये हैं, सुख प्राप्त हो गया है।

सत्गुरु के पूर्ण उपदेश द्वारा जन्म और मरण के संशय मिट गये हैं।

भय दूर हो गया है और निर्भय हो कर बस रहे हैं।

सब व्याधियां मन से नष्ट हो गई हैं।

जिस वाहिगुरु का दास यह जीव था, जब उस ने कृपा की

तब सत्गुरु साधु संग में मिल कर उस ने मुरारि नाम को जपा।

श्री सत्गुरु जी कहते हैं वाहिगुरु-यश को श्रवण द्वारा सुन कर स्थिरता पा ली और भ्रम कर जो आना जाना था सो छूट गया ॥ ७ ॥

निर्गुण और सगुण दोनों स्वरूप (प्रभु) आप ही है.

जिस ने शक्ति धार कर सब को मोह लिया है।

अपने चरित्र वाहिगुरु ने आप बनाये हैं।

अपुनी कीमति आपे पाए ॥
हरि बिनु दूजा नाही कोइ ॥
सरब निरंतरि एको सोइ ॥
ओति पोति रविआ रूप रंग ॥
भये प्रगास साध कै संग ॥
रचि रचना अपनी कल धारी ॥
अनिक बार नानक बलिहारी ॥ ८ ॥ १८ ॥

सलोकु

साथि न चालै बिनु भजन बिखिआ सगली छारु ॥
हरि हरि नामु कमावना नानक इहु धनु सारु ॥ १ ॥

असटपदी

संत जना मिलि करहु बीचारु ॥
एकु सिमरि नाम आधारु ॥
अवरि उपाव सभि मीत बिसारहु ॥
चरन कमल रिद महि उरिधारहु ॥
करन कारन सो प्रभु समरथु ॥
द्रिड़ु करि गहहु नामु हरि वथु ॥
इहु धनु संचहु होवहु भगवंत ॥
संत जना का निरमल मंत ॥

अपने मूल्य को आप ही पाता है।

हरि बिना दूसरा कोई नहीं है।

सब में निरन्तर सो एक ही है।

ओत पोत हो कर सब रूप और रंगों में रम रहा है।

यह (उपरोक्त) प्रकाश सत्गुरु साधु संग कर प्राप्त होता है।

जिस ने सृष्टि बना कर अपनी शक्ति द्वारा धारण की है,

श्री सतगुरु जी कहते हैं उस प्रभु पर अनेक बार हम बलिहार जाते हैं ॥ ८ ॥ १८ ॥

सलोकु

भजन बिन संग कछु नहीं जाता (नाम बिना) सारो माया व्यर्थ है।

हे नानक ! हरिनाम का कमाना श्रेष्ठ धन है।

असटपदी

सन्त जनों के संग मिल के विचार करो,

एक नाम का स्मरण करो जो सब का आधार है।

हे मित्र ! और सब उपाय बिसार दो।

वाहिगुरु चरण-कमलों को अपने हृदय में धारो।

सो प्रभु करने और कराने को समर्थ है।

उस प्रभु की नाम वस्तु को दृढ़ कर पकड़ो।

इस हरि-नाम धन को इकत्र करके वड़भागी बनो।

यह संतजनों का निर्मल उपदेश है।

एक आस राखहु मन माहि ॥
सरब रोग नानक मिटिजाहि ॥ १ ॥
जिसु धन कउ चारि कुंट उठि धावहि ॥
सो धनु हरि सेवा ते पावहि ॥
जिसु सुख कउ नित बाछहि मीत ॥
सा सुखु साधू संगि परीरीति ॥
जिसु सोभा कउ करहि भली करनी ॥
सा सोभा भजु हरि की सरनी ॥
अनिक उपावी रोगु न जाइ ॥
रोगु मिटै हरि अवखधु लाइ ॥
सरब निधान महि हरि नामु निधानु ॥
जपि नानक दरगहि परवानु ॥ २ ॥

मनु परबोधहु हरि कै नाइ ॥
दहदिसि धावत आवै ठाइ ॥
ता कउ बिघनु न लागै कोइ ॥
जा कै रिदै बसै हरि सोइ ॥
कलि ताती ठांढा हरि नाउ ॥
सिमरि सिमरि सदा सुख पाउ ॥
भउ बिनसै पूरन होइ आस ॥
भगति भाइ आतम परगास ॥

एक वाहिगुरु-आशा को मन में धारो।
श्री सत्गुरु जी कहते हैं तब तुम्हारे सब रोग मिट जायंगे ॥१॥
जिस धन प्राप्ति निमित्त तूं उठ कर चारों दिशा में दौड़ता है
उस धन को हरि-सेवा कर तू पा सकता है।
हे मित्र! जिस सुख को तू सदा चाहता है,
सो सुख साधु-संग में प्रीति करने से मिलता है।
जिस शोभा की प्राप्ति निमित्त तू भले काम करता है।
सो शोभा हरि-शरण सेवन से मिलती है।
अनेक उपाय करने पर भी जो रोग नहीं जाता,
सो हरि-नाम रूप औषधि लगाने से मिट जाता है।
सब सिद्धियों में हरिनाम ही श्रेष्ठ सिद्धि है।
श्री जगत्गुरु जी कहते हैं वाहिगुरु नाम को जप, जिस से
परलोक में मान हो ॥ २ ॥

वाहिगुरु-नाम द्वारा मन को समझाओ।
जिस से दशों दिशा में दौड़ता मन ठिकाने आ जाय।
उस (जीव) को कोई विघ्न नहीं व्यापता,
जिस के हृदय में सो वहिगुरु बसता है।
कलियुग तप्त है और हरिनाम शीतल है।
(हे भाई) प्रभु स्मरण करके नित्य सुख पाओ
(इस से) भय विनाश होगा और आशा पूर्ण होगी।
भक्ति भाव से आत्म-प्रकाश होता है,

तितु घरि जाइ वसै अविनासी ॥
कहु नानक काटी जम फासी ॥ ३ ॥

ततु वीचारु कहै जनु साचा ॥
जनमि मरै सो काचो काचा ॥
आवा गवनु मिटै प्रभ सेव ॥
आपु तिआगि सरनि गुरदेव ॥
इउ रतन जनम का होइ उधारु ॥
हरि हरि सिमरि प्रान आधारु ॥
अनिक उपाव न छूटनहारे ॥

सिम्रिति सासत वेद वीचारे ॥
हरि की भगति करहु मनु लाइ ॥
मनि बांछत नानक फल पाइ ॥ ४ ॥

संगि न चालसि तेरै धना ॥
तूं किआ लपटावहि मूरख मना ॥
सुत मीत कुटंब अरु बनिता ॥
इन ते कहहु तुम कवन सनाथा ॥
राज रंग माइआ बिसथार ॥
इन ते कहहु कवन छुटकार ॥
असु हसती रथ असवारी ॥
झूठा डंफु झूठु पासारी ॥

पुनः जीव उस अविनाशी घर में जा कर वसता है।
श्री जगत्-गुरू जी कहते हैं, जहां यम-फासी कटी हुई है ॥ ३ ॥
सच्चा पुरुष तत्व विचार कथन करता है।
जो जन्मता और मरता है सो अति कच्चा है।
आना और जाना प्रभु-सेवा से मिटता है।
आपा भाव त्याग के गुरुदेव की शरण में जा
इस प्रकार इस रत्न जन्म का उद्धार होता है।
वाहिगुरू नाम का स्मरण कर, जो प्राणों का आधार है।
(अन्य) जो अनेक उपाय हैं उन कर जीव माया के बन्धनों
से छूट नहीं सकता।
स्मृति शास्त्र और वेद भी विचार यर देख लिये हैं।
हरि भक्ति ही मन लगा कर करो।
श्री सत्गुरु जी कहते हैं, जिस से मन वांच्छित फल पावोगे ॥४॥
तुमरे संग धन ने नहीं जाना।
हे मुग्ध-मन तू इस के संग क्यों लंपट हुआ है।
पुत्र, मित्र, कुटुम्ब और स्त्री
आदि से तुम ही बताओ कौन सनाथ हुआ है?
राज्य, रंग और मायक-विस्तार
आदि से वता तो किस की माया के बन्धनों से खलासी हुई है?
घोड़े, हाथी, रथ और जो (अन्य) वाहन है
यह सब झूठा दम्भ और झूठा पसारा है।

जिनि दीए तिसु बुझै न बिगाना ॥

नामु बिसारि नानक पछुताना ॥ ५ ॥
गुर की मति तूं लेहि इआने ॥
भगति बिना बहु डूबे सिआने ॥
हरि की भगति करहु मन मीत ॥
निरमल होइ तुमारो चीत ॥
चरन कमल राखहु मन माहि ॥
जनम जनम के किलबिख जाहि ॥
आपि जपहु अवरा नामु जपावहु ॥
सुनत कहत रहत गति पावहु ॥
सार भूत सति हरि को नाउ ॥
सहजि सुभाइ नानक गुन गाउ ॥ ६ ॥

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु ॥
बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ।
होहि अचिंतु बसहि सुख नालि ॥
सासि ग्रासि हरि नामु समालि ॥
छाडि सिआनप सगली मना ॥
साध संगि पावहि सचु धना ॥
हरि पूंजी संचि करहु बिउहारु ।
ईहा सुखु दरगह जैकारु ॥

जिस वाहिगुरू ने यह सब पदार्थ दिये हैं उस को (यह) मूढ़ नहीं पहचानता।

हे नानक ! नाम को भूल कर यह जीव पश्चात्ताप करता है ॥५॥

हे मूढ़, गुरु की शिक्षा ग्रहण कर, क्योंकि

भक्ति बिना बहुत बुद्धिमान् डूब गये हैं।

हे मित्र, मन में हरि-भक्ति कर जिस से

तुम्हारा चित्त निर्मल हो जाय।

प्रभु-चरण-कमलों को मन में धारण कर

जिस से जन्म जन्मान्तरों के पाप चले जायं।

स्वयं वाहिगुरू नाम जपो दूसरों से जपाओ।

वाहिगुरू-नाम सुनते, कहते और धारण करते मुक्ति प्राप्त करो

सत्य और श्रेष्ठ पदार्थ (केवल) हरिनाम है।

श्री जगत् गुरू जी कहते हैं स्वाभाविक अथवा शान्ति पूर्वक हरि-गुण गाओ ॥६॥

वाहिगुरू-गुण गान करने से तुम्हारी मल निवृत्त होगी।

अहन्ता-रूप विष का प्रभाव नाश हो जायगा।

चिन्ता-रहित हो कर (तू) सुख पूर्वक (अपने स्वरूप में) बसेगा।

(सासि ग्रासि) सदा हरिनाम स्मरण कर।

हे मन सब बुद्धिमत्ता को त्याग दे।

साधु संगति में मिल कर सच्चा धन पायेगा।

वाहिगुरू-नाम की पूंजी इकत्र करके व्यवहार कर।

इसलोक में सुख और परलोक में जयकार होगा।

सरब निरंतरि एको देखु ॥
कहु नानक जा कै मसतकि लेखु ॥ ७ ॥

एको जपि एको सालाहि ॥
एकु सिमरि एको मन आहि ॥
एकस के गुन गाउ अनंत ॥
मनि तनि जापि एक भगवंत ॥
एको एकु एकु हरि आपि ॥
पूरन पूरि रहिओ प्रभु बिआपि ॥
अनिक बिसथार एक ते भए ॥
एकु अराधि पराछत गए ॥
मन तन अंतरि एकु प्रभु राता ॥
गुरप्रसादि नानक इकु जाता ॥ ८ ॥ १९ ॥

सलोकु

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ ॥ १ ॥

असटपदी

जाचक जनु जाचै प्रभ दानु ॥
करि किरपा देवहु हरि नामु ॥

सब में निरन्तर एक वाहिगुरू को देख

श्री सतगुरु जी कहते हैं (यह दृष्टि उस को प्राप्त होती है)
जिस के मस्तक में उत्तम लेख हो।७।

एक वाहिगुरू को जप और एक उस की ही महिमा कर।

एक का स्मरण और एक ही की मन में इच्छा कर।

एक अनन्त ही के गुण गान कर।

मन और तनु कर एक भगवंत को जप।

सदा-स्थिर एक वाहिगुरू ही है।

वह व्यापक और पूर्ण प्रभु सब में पूर्ण हो रहा है।

यह अनेक विस्तार एक से हुये हैं।

उस एक के स्मरण करने से पाप दूर हो जाते हैं।

(जिस के) मन और तन के अन्दर एक प्रभु रच रहा है,

हे नानक! गुरु कृपा कर उस ने एक को जान लिया है॥
८॥१६॥

सलोकु

हे प्रभो, फिरता फिरता मैं आया हूँ और तुम्हारी शरण में
पड़ा हूँ।

श्री सतगुरु जी कहते हैं, हे प्रभो! मेरी बिनती है कि आप मुझे
अपनी भक्ति में लगा लो।

असटपदी

मांगने वाला दास हे प्रभो! दान मांगता है।

कृपा कर हरिनाम का दान दो।

साध जना की मागउ धूरि ॥
पारब्रहम मेरी सरधा पूरि ॥
सदा सदा प्रभ के गुन गावउ ॥
सासि सासि प्रभ तुमहि धिआवउ ॥
चरन कमल सिउ लागै प्रीति ॥
भगति करउ प्रभ की नित नीति ॥
एक ओट एको आधारु ॥
नानकु मागै नामु प्रभ सारु ॥ १ ॥

प्रभ की द्रिसटि महा सुखु होइ ॥
हरि रसु पावै बिरला कोइ ॥
जिन चाखिआ से जन त्रिपताने ॥
पूरन पुरख नही डोलाने ॥
सुभरि भरे प्रेम रस रंगि ॥
उपजै चाउ साध कै संगि ॥
परे सरनि आन सभ तिआगि ॥
अंतरि प्रगास अनदिनु लिव लागि ॥

वडभागी जपिआ प्रभु सोइ ॥
नानक नामि रते सुखु होइ ॥ २ ॥
सेवक की मनसा पूरी भई ॥
सतिगुर ते निरमल मति लई ॥

साधु जन की धूलि मांगता हूं ।

हे पारब्रह्म यह मेरी इच्छा पूर्ण करो ।

सदा मैं प्रभु-गुण गाऊं ।

श्वास श्वास हे प्रभो ! मैं तुम्हारा ही ध्यान करूं ।

आप के चरण कमलों के संग मेरी प्रीति बने ।

सदैव काल प्रभु-भक्ति ही को करूं ।

एक तुम ही मेरी ओट हो और एक तुम ही मेरा आधार हो ।

श्री सतगुरु जी कहते हैं हे प्रभु मैं आप का श्रेष्ठ नाम मांगता हूं ॥ १ ॥

प्रभु की कृपा-दृष्टि होने पर महा सुख होता है ।

हरि-रस को कोई बड़भागी पुरुष पाता है ।

जिन्होंने इस रस को चखा है सो तृप्त हुये हैं ।

सो पूर्ण पुरुष कभी नहीं डोलते ।

प्रेम-रस के आनन्द में सो लबालब पूर्ण हैं ।

उन को साधु-संग से चाउ उत्पन्न होता है ।

अन्य सब कछु त्याग के सो आप की शरण में पड़े हैं ।

उन के हृदय में प्रकाश है अत एव दिन रात उन की लिव लगी रहती है ।

बड़भागी पुरुषों ने सो प्रभु नाम जपा है ।

हे नानक ! नाम में प्रीति करने से सुख होता है ॥ २ ॥

सेवक की इच्छा पूरी हुई,

जब सतगुरु से निर्मल शिक्षा प्राप्त की ।

जन कउ प्रभु होइओ दइआलु ॥
सेवकु कीनो सदा निहालु ॥
बंधन काटि मुकति जनु भइआ ॥
जनम मरन दूखु भ्रमु गइआ ॥
इछ पुंनी सरधा सभ पूरी ॥
रवि रहिआ सद संगि हजूरी ॥

जिस का सा तिनि लीआ मिलाइ ॥
नानक भगती नामि समाइ । ३ ॥

सो किउ बिसरै जि घाल न भानै ॥

सो किउ बिसरै जि कीआ जानै ॥
सो किउ बिसरै जिनि सभु किछु दीआ ॥
सो किउ बिसरै जि जीवन जीआ ॥
सो किउ बिसरै जि अगनि महि राखै ॥
गुर प्रसादि को बिरला लाखै ॥
सो किउ बिसरै जि बिखु ते काढै ॥
जनम जनम का टूटा गाढै ॥

गुरि पूरै ततु इहै बुझाइआ ।
प्रभु अपना नानक जन धिआइआ ॥ ४ ॥

(अपने) दास पह स्वयं प्रभु दयालु हुआ है (अपने).

सेवक को सदा के लिये सुखी किया है।

(प्रभु का) दास अपने बन्धन काट कर मुक्त हुआ है।

(जन का) जन्म मरन का दुःख और भ्रम दूर हुआ है।

सब इच्छा और श्रद्धा पूर्ण हुई है।

क्योंकि व्यापक जो परमेश्वर है सो सदा जन को संग और प्रत्यक्ष दृष्टि में आ रहा है।

जिस वाहिगुरू का दास था, उस ने अपने संग मिला लिया है।

हे नानक! (प्रभु का सेवक) भक्ति कर नामी में अभेद हुआ है॥ ३॥

सो वाहिगुरू क्यों भूले जो किये हुये परिश्रम को व्यर्थ नहीं करता?

सो वाहिगुरू क्यों भूले जो किया जानता है?

सो वाहिगुरू क्यों भूले जिस ने सब कुछ दिया है?

सो वाहिगुरू क्यों भूले जो जीवन का जीवन है?

सो वाहिगुरू क्यों भूले जो जठराग्नि में बचाता है?

गुरु-कृपा से उस को कोई बड़भागी जानता है।

सो वाहिगुरू कयों भूले जो पाप-रूप विष से निकालता है,

(और) जन्म जन्मान्तरों के वियोगी जीव को अपने संग मिला लेता है?

पूर्ण गुरु ने हम को यह तत्व निश्चय कराया है (कि मत भूलो)

हे नानक! (इस लिये) दासों ने प्रभु का ध्यान किया है॥४॥

साजन संत करहु इहु कामु ॥
आन तिआगि जपहू हरि नामु ॥
सिमरि सिमरि सिमरि सुख पावहु ॥
आपि जपहु अवरह नामु जपावहु ॥
भगति भाइ तरीऐ संसारु ॥
बिनु भगती तनु होसी छारु ॥
सरब कलिआण सूख निधि नामु ॥
बूडत जात पाए बिसरामु ॥
सगल दूख का होवत नासु ॥
नानक नामु जपहु गुनतासु ॥ ५ ॥
उपजी प्रीति प्रेम रसु चाउ ॥
मन तन अंतरि इही सुआउ ॥
नेत्रहु पेखि दरसु सुखु होइ ॥
मनु बिगसै साध चरन धोइ ॥
भगत जना कै मनि तनि रंगु ॥
बिरला कोऊ पावै संगु ॥
एक बसतु दीजै करि मइआ ॥
गुर प्रसादि नामु जपि लइआ ॥
ता की उपमा कही न जाइ ॥
नानक रहिआ सरब समाइ ॥ ६ ॥
प्रभ बखसंद दीन दइआल ॥

हे सज्जनो ! हे सन्तो ! यह काम करो।

अन्य सब (ओट) त्याग के हरिनाम जपो।

पुनः पुनः स्मरण कर के सुख प्राप्त करो।

स्वयं भी नाम जपो और दूसरों को भी नाम जपाओ।

भक्ति-भाव कर संसार से तरना होता है

बिना भक्ति के शरीर व्यर्थ होगा।

सब मुक्ति और सुख की निद्धि नाम है !

डूबता हुआ भी नाम कर सुख पाता है।

नाम कर सब दुःखों का विनाश होता है।

श्री सतगुरु जी कहते हैं गुणों के समुद्र नाम को जपो ॥ ५ ॥

मेरे अन्दर प्रीति और प्रेम रस का चाव उत्पन्न हुआ है।

मेरे मन और तन में एक यही प्रयोजन दृढ़ हो रहा है।

नेत्रों से महा पुरुषों का दर्शन कर के सुख होता है।

साधु-चरण धो कर मन प्रफुल्लित होता है।

भक्त जनों के मन और शरीर में आनन्द होता है,

कोई बड़भागी ही साधुसंग को पाता है।

हे प्रभो, कृपा करके एक वस्तु दीजिये।

गुरु-कृपा कर मैं नाम को जप लूं।

उस वाहिगुरू की उपमा कही नहीं जाती।

श्री सतगुरु जी कहते हैं सो प्रभु सब में समा रहा है ॥ ६ ॥

प्रभु बखशनेवाला और दीन-दयालु है।

भगति वछल सदा किरपाल ॥
अनाथ नाथ गोबिंद गुपाल ॥
सरब घटा करत प्रतिपाल ।
आदि पुरखं कारण करतार ॥
भगत जना के प्रान अधारं ॥
जो जो जपै सु होइ पुनीत ॥
भगति भाइ लावै मन हीत ॥
हम निरगुनीआर नीच अजान ॥
नानक तुमरी सरन पुरख भगवान ॥ ७ ॥

सरब बैकुंठ मुकति मोख पाए ॥
एक निमख हरि गुन गाए ॥
अनिक राज भोग वडिआई ॥
हरि के नाम की कथा मनि भाई ॥
बहु भोजन कापर संगीत ॥

रसना जपती हरि हरि नीत ॥
भली सु करनी सोभा धनवंत ॥
हिरदै बसे पूरन गुरमंत ॥
साध संगि प्रभ देहु निवास ॥
सरब सूख नानक परगास ॥ ८ ॥ २० ॥

भक्ति का प्यार करने वाला और सदा कृपालु है।
अनाथ का नाथ, गोविन्द और गोपाल है।
सब जीवों का पालन करता है।
आदि पुरुष, (सृष्टि का कारण) और कर्तार है।
भक्तजनों के प्राणों का आधार है।
जो जो जीव उस को जपता है सो सो पवित्र होता है।
भक्ति-भाव द्वारा हित पूर्वक मन को वाहिगुरू में लगाता है।
हे प्रभु, हम निर्गुण, नीच और अजान हैं।
श्री सत्गुरु जी कहते हैं हे (अकाल) पुरुष ! हम तुम्हारी शरण हैं ॥७॥
उस ने वैकुण्ठ जीवन, मुक्ति और मोक्ष को पा लिया है,
जिस ने एक निमिष मात्र हरि गुण गाया है।
उस ने अनेक राज्य-भोग और वड़ाई को पा लिया है,
जिस के मन में हरिनाम कथा भाई है
उस ने बहुत प्रकार के भोजन, वस्त्र, और संगीत का आनन्द लिया है,
जिस की जिह्वा सदा हरिनाम जपती है।
उन की करणी और शोभा भली है, सो धनाढ्य हैं,
जिन के हृदय में पूर्ण गुरु का (उपदेश) बसता है।
हे प्रभो ! साधु संग में स्थान दे।
श्री जगत् गुरु जी कहते हैं जिस से सब सुखों का प्रकाश होता है ॥ ८ ॥ २० ॥

सलोकु

सरगुन निरगुन निरंङ्कार सुंन समाधी आपि ॥

आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि ॥ १ ॥

असटपदी ॥

जब अकारु इहु कछु न दृसटेता ॥
पाप पुंन तब कह ते होता ॥
जब धारी आपन सुंन समाधि ॥
तब बैर बिरोध किसु संगि कमाति ॥
जब इसका बरनु चिहनु न जापत ।
तब हरख सोग कहु किसहि बिआपत ॥
जब आपन आप आपि पारब्रहम ॥
तब मोह कहा किसु होवत भरम ॥
आपन खेलु आपि वरतीजा ॥
नानक करनैहारु न दूजा ॥१॥
जब होवत प्रभ केवल धनी ।

तब बंध मुकति कहु किस कउ गनी ॥
जब एकहि हरि अगम अपार ॥
तब नरक सुरग कहु कउन अउतार ॥

सलोकु

वह निरंकार सगुण, निर्गुण व निर्विकल्प समाधि रूप भी आप ही है।

हे नानक ! वह अपने किये हुये जगत को आप ही ध्यान में रखता है।

असटपदि

जब इस जगत का आकार कछु दृष्टि गोचर न था,

तब पाप और पुण्य किस से होता था ?

जब प्रभु आप शून्य समाधि में स्थित था,

तब कोई वैर विरोध किस के संग कमाता था ?

जब इस (जगत) का (कोई) रूप रंग न था,

तब बताओ हर्ष और शोक किस को व्यापता था ?

जब अपने आप में आप पारब्रह्म था

तब मोह और भ्रम किस को होता था ?

अपना खेल रूप संसार प्रभु ने आप बनाया है।

हे नानक ! सृष्टि का कर्त्ता कोई दूसरा नहीं है ॥ १ ॥

जब मालक प्रभु केवल आप ही आप है (भाव जब कोई जीव उत्पन्न न हुए हों),

तब बताओ किस को कर्म (बद्ध) गिना जाए और किस को मुक्त

जब अगम्य और अपार प्रभु एक आप ही है,

तब बताओ नरक और स्वर्ग में कौन जन्म लेता है, भाव उस समय कोई नरक व स्वर्ग हो ही नहीं सकता।

जब निरगुन प्रभ सहज सुभाइ ।

तब सिव सकति कहहु कितु ठाइ ॥
जब आपहि आपि अपनी जोति धरै ॥

तब कवन निडरु कवन कत डरै ॥
आपन चलित आपि करनैहार ॥
नानक ठाकुर अगम अपार ।.२।
अबिनासी सुख आपन आसन ॥
तह जनम मरन कहु कहा बिनासन॥

जब पूरन करता प्रभु सोइ ॥
तब जम की त्रास कहहु किसु होइ ॥
जब अबिगत अगोचर प्रभ एका ॥
तब चित्र गुपत किसु पूछत लेखा ॥
जब नाथ निरंजन अगोचर अगाधे ॥
तब कउन छुटे कउन बंधन बाधे ॥
आपन आप आप ही अचरजा ॥
नानक आपन रूप आप ही उपरजा ॥ ३ ॥
जह निरमल पुरखु पुरखपति होता ॥
तह बिनु मैलु कहहु किआ धोता ॥
जह निरंजन निरंकार निरबान ॥

जब प्रभु निर्गुण अवस्था में अपने सहज स्वरूप के मध्य होता है,

तब बताओ जीव और माया कौन स्थान में होती है ?

जब अपने में अपनी ज्योति धारण करता है भाव जब केवल आप ही होता है,

तब कौन भय रहित और कौन किसी से भय करता है ?

अपने चरित्र रूप संसार को आप करने वाला है।

हे नानक ! वाहिगुरु अगम्य और अपार है ॥ २ ॥

जब अविनाशी प्रभु अपने आप में ही आनन्द है,

तब बताओ वहां (जीवों का) जन्म, मरण और विनाश कहां होता है ?

जब पूर्ण कर्त्ता प्रभु स्वयं ही है,

तब बताओ यम का भय किस को हो ?

जब अविगत व अगोचर प्रभु एक आप ही है,

तब चित्र गुप्त किस को लेखा पूछें ?

जब माया-रहित, अगोचर व अगाध नाथ स्वयं ही है,

तब कौन मुक्त और कौन बन्धनों में बांधे होते हैं ?

अपने आप में आप ही आश्चर्य रूप है,

हे नानक ! (उस ने) अपना रूप आप ही उत्पन्न किया है ॥३॥

जब पुरुष-पति निर्मल प्रभु स्वयं ही होता है,

तब बताओ मल-अभाव होने के कारण (कोई) क्या धोता है ?

जहां माया-रहित निर्वाण निरंकार ही होता है,

तह कउन कउ मान कउन अभिमान ॥
जह सरूप केवल जगदीस ॥
तह छल छिद्र लगत कहु कीस ॥
जह जोति सरूपी जोति संगि समावै ।
तह किसहि भूख कवनु त्रिपतावै ॥
करन करावन करनै हारु ॥
नानक करते का नाहि सुमारु ॥ ४ ॥

जब अपनी सोभा आपन संगि बनाई ॥
तब कवन माइ बाप मित्र सुत भाई ॥
जह सरब कला आपहि परबीन ॥
तह बेद कतेब कहा कोऊ चीह्न ॥
जब आपन आपु आपि उरधारै ॥
तउ सगन अपसगन कहा बीचारै ॥
जह आपन ऊच आपन आपि नेरा ॥
तह कउन ठाकुरु कउनु कहीऐ चेरा ॥
बिसमन बिसम रहे बिसमाद ॥
नानक अपनी गति जानहु आपि ॥ ५ ॥

जह अछल अछेद अभेद समाइआ ॥
ऊहा किसहि बिआपत माइआ ॥
आपस कउ आपहि आदेसु ॥

तहां किस को मान और किस को अभिमान होता है ?
जहां केवल जगदीश स्वरूप ही है,
वहां बताओ छल और छिद्र किस को लगता है ?
जहां ज्योति-स्वरूप अपनी ज्योति में समाया है,
वहां किस को भूख होती है और कौन तृप्त कराने वाला है ?
कर्तार ही करने और कराने वाला है !
हे नानक ! कर्ता की संख्या नहीं है मात्र अनंत स्वरूप है ॥ ४॥
जब अपनी शोभा प्रभु ने अपने संग ही बनाई थी,
तब कौन माता पिता मित्र पुत्र और भाई था ?
जहां सब शक्तियों कर स्वयं ही प्रवीण था,
तब वेद और कतेब कहां और कौन उन के जानने वाला था ?
जब अपने आप को आप अपने हृदय में धारता है,
तब मंगल और अमंगल कौन और कहां विचारता है?
जब आप ही ऊंचा और आप ही समीप है,
तब कौन स्वामी और किस को सेवक कहिये ?
हम आश्चर्य्य स्वरूप को देख कर अति आश्चर्य्य हो रहे हैं।
श्री जगत्-गुरु जी कहते हैं हे वाहिगुरु तुम अपनी गति को
आप ही जानते हो ॥ ५ ॥
जहां छल छेद और भेद विहीन प्रभु स्थित है,
वहां माया किस को व्यापे है ?
वहां अपने को आप ही नमसकार करता था।

तिहु गुण का नाही परवेसु ॥
जह एकहि एक एक भगवंता ॥
तह कउनु अचितु किसु लागै चिंता ॥
जह आपन आपु आपि पतीआरा ॥
तह कउनु कथै कउनु सुननै हारा ॥
बहु बेअंत ऊच ते ऊचा ॥
नानक आपस कउ आपहि पहूचा ॥ ६ ॥

जह आपि रचिओ परपंचु अकारु ॥
तिहु गुण महि कीनो बिसथारु ॥
पापु पुंनु तह भई कहावत ॥
कोऊ नरक कोऊ सुरग बंछावत ॥

आल जाल माइआ जंजाल ॥
हउमै मोह भरम भै भार ॥
दूख सूख मान अपमान ॥
अनिक प्रकार कीओ बख्यान ॥
आपन खेलु आपि करि देखै ॥
खेलु संकोचै तउ नानक एकै ॥ ७ ॥

जह अबिगतु भगतु तह आपि ॥

वहां तीन गुणों का प्रवेश भी नहीं था।

जहां एक ही एक केवल एक भगवन्त है,

वहां कौन चिंता-रहित और किस को चिंता लगे है ?

जहां अपने आप से आप पतीजता है,

वहां कौन वक्ता और कौन श्रोता होता है ?

वाहिगुरू अन्त-रहित और ऊंचे से ऊचा है।

हे नानक ! अपने आप को वह आप ही पहुंचा है, भाव अपनी बड़ाई वह आप ही जानता है ॥ ६ ॥

जब वाहिगुरू ने स्वयं ही सृष्टि का स्वरूप बनाया,

और तीनों गुणों में विस्तार किया,

तब पाप और पुण्य की कथा बन गई,

कोई नरक (से भय करता है) और कोई स्वर्ग की इच्छा करता है।

(आल जाल) गृह बन्धे, माया में आसक्ति,

अहन्ता, मोह, भ्रम, भय और भार,

दुख सुख मान और अपमानादि

अनेक प्रकार कर के (पुस्तकादिकों में) कथय चल पड़े।

वाहिगुरू अपना खेल आप बना कर देखता है।

हे नानक। जब खेल संकोच ले तब एक स्वयं ही रह जाता है ॥ ७ ॥

जहां अविनाशी वाहिगुरू है वहां भक्त और जहां भक्त वहां स्वयं वाहिगुरू है।

जह पसरै पासारु सत परतापि ॥

दुहू पोख का आप है धनी ॥

उन की शोभा उनहू बनी ॥
आपहि कउतक करै अनद चोज ॥
आप ही रस भोगन निरजोग ॥
जिसु भावै तिसु आपन नाइ लावै ॥
जिसु भावै तिसु खेल खिलावै ॥
बेसुमार अथाह अगनत अतोलै ॥
जिउ बुलावहु तिउ नानक दास बोलै ॥ ८ ॥ २१ ॥

सलोकु

जीअ जंत के ठाकुरा आपे वरतणहार ॥
नानक एको पसरिआ दूजा कहि द्रिसटार ॥ १ ॥

असटपदी

आपि कथै आपि सुननैहारु ॥
आपहि एकु आपि बिसथारु ॥
जा तिसु भावै ता स्रिसटि उपाए ॥

जहां विस्तार सृष्टि का करता है वहां संतों के प्रताप हित ही करता है।

(दुहू पाख) निर्गुणता और सगुणता का आप ही स्वामी है भाव प्रभु जब निर्गुण होता है तब भक्त जन निर्गुणता में लवलीन होते हैं जब दृश्य का विस्तार करता है तब वह संत रूप हो कर प्रभु महिमा को प्रगट करते हैं।

उन की शोभा उन को ही बने है।

आप ही कौतुक, अनन्द और चोज करता है।

आप ही रसों को भोगता हुआ असंग रहता है।

जिस को चाहता है उसको अपने नाम में लगा लेता है।

जिस को चाहता है उस को संसार रूप खेल में खिलाता है।

अनंत, अथाह, संख्या-रहित और अतोल है।

श्री सतगुरु जी कहते हैं हे प्रभो जिस प्रकार आप बुलाते हो उसी प्रकार हम बोलते हैं ॥ ८ ॥ २१ ॥

सलोकु

हे जीव- जंतु के स्वामी तू आप ही सब में विराजमान हैं।

श्री गुरुनानक देव जी कहते हैं एक तुम ही सब में व्यापक हो, दूसरा कोई कहां दृष्टि मे आता है ॥ १ ॥

असटपदी

(प्रभु) स्वयं ही वक्ता और स्वयं ही श्रोता है।

स्वयं ही एक और स्वयं ही अनेक रूप है।

ज ब प्रभु को भाता है तब सृष्टि उत्पन्न करता है।

आपनै भाणै लए समाए ॥
तुम ते भिंन नहीं कछु होइ ॥
आपन सूति सभु जगतु परोइ ॥
जा कउ प्रभ जीउ आपि बुझाए ॥
सचु नामु सोई जनु पाए ॥
सो सम दरसी तत का बेता ॥
नानक सगल स्रिसटि का जेता ॥ १ ॥
जीअ जन्त्र सभ ताकै हाथ ॥
दीन दइआल अनाथ को नाथु ॥
जिसु राखै तिसु कोइ न मारै ॥
सो मूआ जिसु मनहु विसारै ॥
तिसु तजि अवर कहा को जाइ ॥
सभ सिरि एकु निरंजनराइ ॥
जीअ की जुगती जाकै सभ हाथि

अंतरि बाहरि जानहु साथि ॥

गुण निधान बे अंत अपार ॥
नानक दास सदा बलिहार ॥ २ ॥

पूरन पूरि रहे दइआल ॥
सभ ऊपरि होवत क्रिपाल ॥

पुनः अपनी आज्ञानुसार उन को अपने में समेट लेता है।
हे प्रभो ! तुम से भिन्न तो कछु भी नहीं होता।
अपने सूत में तुम ने सब जगत् को परो रक्खा है।
जिस को प्रभु जी स्वयं सुझा देते हैं।
सच्चा नाम वही जन पाता है।
वही समदर्शी और तत्व वेत्ता है।
हे नानक ! वही सब सृष्टि को जीतने वाला है ॥ १ ॥
जीव जन्तु सब प्रभु-आधीन हैं।
वाहिगुरु दीनों पर दया करने वाला और अनाथों का नाथ है।
जिस को प्रभु राखता है उस को कोई नही मार सकता।
उस को मरा हुआ निश्चय करो
जिस को प्रभु ने अपने मन से भुला दिया है।
प्रभु को त्याग के और कहां कोई जाय ?
कारण कि सब के सिर पर एक माया-रहित वाहिगुरु ही स्वामी है।
जीवों की (उत्पत्ति, पालन, संहारादि सब) युक्ति जिस के हाथ है उस को अन्दर बाहर अपने संग जानो।
वाहिगुरु गुण-निधान, अनंत और अपार है।
श्री जगद्गुरु जी कहते हैं हम दास सर्वदा उस पर बलिहार हैं ॥ २ ॥
दयालु और पूर्ण वाहिगुरु सब मे पूर्ण हो रहा है।
सब के ऊपर प्रभु कृपालु होते हैं।

अपने करतब जानै आपि ॥
अंतरजामी रहिओ बिआपि ॥
प्रतिपालै जीअन बहु भाति ॥
जो जो रचिओ सो तिसहि धिआति ॥
जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥
भगति करहि हरि के गुण गाइ ॥
मन अंतरि बिस्वासु करि मानिआ ॥
करनहारु नानक इकु जानिआ ॥ ३ ॥
जनु लागा हरि एकै नाइ ॥
तिस की आस न बिरथी जाइ ॥
सेवक कउ सेवा बनि आई ॥
हुकमु बूझि परम पदु पाई ॥
इस ते ऊपरि नही बीचारु ॥
जा कै मनि बसिआ निरंकारु ॥
बंधन तोरि भए निरवैर ॥
अनदिनु पूजहि गुर के पैर ॥
इह लोक सुखीए परलोक सुहेले ॥
नानक हरि प्रभि आपहि मेले ॥ ४ ॥
साध संगि मिलि करहु अनंद ॥
गुन गावहु प्रभ परमानंद ॥
राम नाम ततु करहु बीचारु ॥

अपने कर्तव्य को आप जानता है।
वह अन्तर्यामी सब में व्यापक है।
जीवों को अनेक प्रकार पालता है।
जो जो उस ने रचा है सो उस उस का ध्यान करता है।
जिस को चाहता है उस उस को मिला लेता है।
सो भक्ति करते और हरि-गुण गाते हैं।
हे ! नानक ! उन्होंने मन अन्दर विश्वास कर मान लिया है,
और एक वाहिगुरु को ही करनेवाला जाना है ॥ ३ ॥
जो मन एक हरिनाम जपने में लगा है,
उस की आशा व्यर्थ नहीं जाता।
सेवक को सेवा करनी ही योग्य है।
स्वामी-आज्ञा को समझने से परम पद की प्राप्ति होती है।
इस से अधिक और विचार नहीं है।
जिन के मन में निरकार बसा है,
सो बन्धन तोड़ कर निर्वैर हो जाते हैं,
वह हर रोज़ गुरु-चरण पूजते हैं।
(वह) इस लोक में और परलोक मे सुखी होते हैं।
हे नानक ! हरि प्रभु ने उन को आप मिला लिया है ॥ ४ ॥
साधु संग में मिल कर आनन्द करो।
परमानंद स्वरूप प्रभु के गुण गाओ।
राम-नाम रूप तत्व का विचार करो।

दुलभ देह का करहु उधोरु ॥
अंमृत वचन हरि के गुन गाओ ॥
प्रान तरन का इहै सुआओ ॥
आठ पहर प्रभु पेखहु नेरा ॥
मिटै अगिआनु बिनसै अंधेरा ॥
सुनि उपदेसु हिरदै बसावहु ॥
मन इछे नानक फल पावहु ॥ ५ ॥
हलतु पलतु दुइ लेहु सवारि ॥
राम नामु अंतरि उरिधारि ॥
पूरे गुर की पूरी दीखिआ ॥
जिसु मनि बसै तिसु साचु परीखिआ ॥
मनि तनि नामु जपहु लिव लाइ ॥
दूखु दरदु मन ते भउ जाइ ॥
सचु वापारु करहु वापारी ॥
दरगह निबहै खेप तुमारी ॥
एका टेक रखहु मन माहि ॥
नानक बहुरि न आवहि जाहि ॥ ६ ॥
तिस ते दूरि कहा को जाइ ॥
उबरै राखनहारु धिआइ ॥
निरभउ जपै सगल भउ मिटै ॥
प्रभ किरपा ते प्राणी छुटै ॥

(इस यत्न से) दुर्लभ शरीर का उद्धार करो ।
प्रभु के गुण (-पूर्त) अमृत बचन गाओ ।
जीवन को (विकारों से) बचाने का यही साधन है,
आठों पहर प्रभु को समीप देखो ।
इस प्रकार अज्ञान का अन्धेरा मिट जायगा ।
(गुरू) उपदेश सुन कर अपने हृदय में बसाओ ।
इस प्रकार, हे नानक ! मन वांछित फल प्राप्त करेगा ॥ ५ ॥
हृदय अन्दर राम नाम धार कर यह लोक और परलोक दोनों
(सवांर) सुधार लो ।
यह पूर्ण गुरु की पूर्ण शिक्षा है ।
जिस के मन मे बसी है उसने सत्य को पहिचाना है ।
प्रीतिपूर्वक मन और तन कर नाम जपो,
जिस से दुःख, पीड़ा और भय मन से दूर हो जाय ।
हे व्यापारियो ! यह सच्चा व्यापार करो ।
परलोक में यह तुम्हारी खेप सफल होगी ।
एक वाहिगुरू की टेक मन में रक्खो ।
श्री जगत्गुरु जी कहते हैं, पुनः जन्म और मरण नहीं हो ॥ ६॥
उस प्रभु से कोई कहां दूर जा सकता है ?
यह जीव मुक्त होगा तब जब रक्षक वाहिगुरू का ध्यान करेगा ।
निर्भय वाहिगुरू को जपने से सब भय मिट जाते हैं ।
प्रभु-कृपा से ही प्राणी मुक्त होता है ।

जिसु प्रभु राखै तिसु नाही दूख ॥
नामु जपत मनि होवत सूख ॥
चिंता जाइ मिटै अहंकार ॥
तिसु जन कउ कोइ न पहुचनहारु ।
सिर ऊपरि ठाढा गुरु सूरा ।
नानक ता के कारज पूरा ॥ ७ ॥
मति पूरी अंमृतु जा की द्रसटि ॥
दरसनु पेखत उधरत स्रसटि ॥
चरन कमल जाके अनूप ॥
सफल दरसनु सुंदर हरि रूप ॥
धंनु सेवा सेवकु परवानु ॥
अंतरजामी पुरखु प्रधानु ॥
जिसु मनि बसै सु होत निहालु ॥
ताकै निकटि न आवत कालु ॥
अमर भए अमरा पदु पाइआ ॥
साध संगि नानक हरि धिआइआ ॥ ८ ॥ २२ ॥

सलोकु

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेरु बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥ १ ॥

जिस को प्रभु राखता है उस को दुःख नहीं होता ।
नाम जप कर मन में सुख होता है।
चिंता का विनाश हो जाता है और अहंकार मिट जाता है।
उस पुरुष की बराबरी कोई नहीं कर सकता।
हे नानक ! जिस के शिर पर शूरवीर गुरु खड़ा है,
उस के सब कार्य्य पूर्ण हैं ॥ ७ ॥
जिन की बुद्धि पूर्ण, और दृष्टि अमृत-रूप है,
उन का दर्शन कर के सृष्टि का उद्धार होता है।
चरण-कमल जिन के अनूपम हैं,
ऐसे सुन्दर हरि-स्वरूप का दर्शन सफल है।
धन्य सेवा और धन्य सेवक जो उस को परवान हैं।
अंतरयामी प्रधान पुरुष
जिस के मन में बसे है सो निहाल होता है,
पुनः उस के समीप काल नहीं आता।
वह अमर पद पा कर अमर हुए हैं,
हे नानक ! जिन्होंने साधु-संग कर हरि नाम ध्याया है !
॥ ८ ॥ २२ ॥

सलोकु

गुरु ने ज्ञान रूप अंजन दिया है जिस ने अज्ञान रूप अन्धेरे का नाश हुआ है।
हे नानक ! प्रभु की कृपा कर संत मिला है (जिन की कृपा कर) मन में प्रकाश हुआ है ॥ १॥

असटपदी

संत संगि अंतरि प्रभु डीठा ॥
नामु प्रभू का लागा मीठा ॥
सगल समिग्री एकसु घट माहि ॥
अनिक रंग नाना द्रिसटाहि ॥
नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥
तिनि देखिआ जिसु आपि दिखाए ॥
नानक तिसु जन सोझी पाए ॥ १ ॥
सो अंतरि सो बाहरि अनंत ॥
घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत ॥
धरनि माहि आकास पइआल ॥
सरब लोक पूरन प्रतिपाल ॥
बनि तिनि परबति है पारब्रहमु ॥
जैसी आगिआ तैसा करमु ॥
पउण पाणी बैसंतर माहि ॥
चारि कुंट दह दिसे समाहि ॥

असटपदी ॥

साधु-संग कर के हमने अपने अन्दर प्रभु देखा है।
(अतः एव) प्रभु नाम मीठा लगा है।
सब सामग्री भाव रचना एक प्रभु के हृदय में है।
जो अनेक रंग और नाना प्रकार की दिखाई देती हैं।
प्रभु का नाम अमृत और नवनिद्धि-रूप है।
नाम का बास शरीर में है।
निर्विकल्प समाधि जब लगे है तब वहां अनाहद नाद का श्रवण होता है।
इस का स्वरूप कहा नहीं जाता क्योंकि आश्चर्य से आश्चर्य है।
जिस को प्रभु स्वयं दिखाय उसी ने उस को देखा है।
हे नानक ! उस जन को प्रभु सब सूझ देता है ॥ १ ॥
वही अनन्त वाहिगुरू अन्दर है और वही बाहर है।
घट घट में (वह) भगवंत व्यापक हो रहा है।
पृथ्वी, आकाश, पाताल और
सब लोकों में पालक वाहिगुरू पूर्ण है।
बन तृण और पर्वतों में पारब्रह्म है।
जैसी वाहिगुरू की आज्ञा होती है वैसा कर्म सब (जीव) करते हैं।
वायु, जल, अग्नि,
चार कोने और दशों दिशा में समा रहा है।

तिस ते भिन नहीं को ठाउ ॥
गुरप्रसादि नानक सुखु पाउ ॥ २ ॥
वेद पुरान सिंमृति महि देखु ॥
ससीअर सूर नख्यत्र महि एकु ॥
बाणी प्रभ की प्रभु को बोलै ॥
आपि अडोलु न कबहू डोलै ॥
सरब कला कर खेलै खेल ॥
मोलि न पाईऐ गुणह अमोल ॥

सरब जोति महि जाकी जोति ॥
धारि रहिओ सुआमी ओत पोति ॥
गुर प्रसादि भरम का नासु ॥
नानक तिन महि एहु बिसासु ॥ ३ ॥
संत जना का पेखनु सभु ब्रहम ॥
संत जना कै हिरदै सभि धरम ॥
संत जना सुनहि सुभ बचन ॥
सरब बिआपी राम संगि रचन ॥
जिनि जाता तिस की इह रहत ॥

सति बचन साधू सभि कहत ॥
जो जो होइ सोई सुखु मानै ॥
करन करावनहारु प्रभु जानै ॥

वाहिगुरू से भिन्न कोई स्थान नहीं है।

हे नानक ! गुरु-कृपा कर सुख प्राप्त होता है ॥ २ ॥

वेद, पुराण,स्मृति,

चन्द्र, सूर्य और तारा गण एक वाहिगुरू को ही पूर्ण देख।

प्रभु की वाणी को सब कोई बोलता है।

वाहिगुरू स्वयं अडोल है, अतःएव कभी भी डोलता नहीं।

सब शक्तियां बना कर खेल खेलता है।

अमूल्य होने के कारण,प्रभु के गुणों का मूल्य नहीं पाया जाता।

सब प्रकाशों में जिस का प्रकाश है।

सो स्वामी ओत पोत हो कर सब को धारण कर रहा है।

गुरु-कृपा से जिन का भ्रम नाश हुआ है,

हे नानक ! उन में ही यह विश्वास है। ३ ॥

सन्तजन सब स्थान में ब्रह्म को देखते हैं।

सन्तजनों के हृदय में सब धर्म ही है।

सन्तजन शुभ वचन श्रवण करते हैं,

(क्योंकि) वह सर्व-व्यापक राम संग अभेद हैं।

यह उपरोक्त धारणा उस (पुरुष) की है जिस ने प्रभु को जान लिया है।

(और वह) साधु सत्य बचन करता है।

(प्रभु को रज़ा म) जो कछ होता है उसी को सुख मानता है।

(वह) एक प्रभु को ही करने और करानेवाला जानता है।

अंतरि बसे बाहरि भी ओही ॥
नानक दरसनु देखि सभ मोही ॥ ४ ॥

आपि सति कीआ सभु सति ॥
तिस प्रभ ते सगली उतपति ॥
तिसु भावै ता करे बिसथारु ॥
तिसु भावै ता एकंकारु ॥
अनिक कला लखी नह जाइ ॥
जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥
कवन निकटि कवन कहीऐ दूरि ॥
आपे आपि आपि भरपूरि ॥
अंतर गति जिसु आपि जनाए ॥
नानक तिसु जन आपि बुझाए ॥५ ॥
सरब भूत आपि वरतारा ॥
सरब नैन आपि पेखनहारा ॥
सगल समग्री जा का तना ॥
आपन जसु आप ही सुना ॥
आवन जानु इकु खेलु बनाइआ ॥
आगिआ कारी कीनी माइआ ॥
सभ कै मधि अलिपतो रहै ॥
जो किछु कहणा सु आपे कहै

(उस के लिये) जो (प्रभु) अन्दर बसता है सोई बाहर है।
हे नानक ! (ऐसे महा पुरुष का) दर्शन देख कर सब सृष्टि मुग्ध हुई है॥ ४ ॥
प्रभु स्वयं सत्य है अतः एव उस का किया कार्य्य, भी सब सत्य है।
उसी प्रभु से सब सृष्टि उत्पन्न हुई है।
जब उस प्रभु को भाता है तब विस्तार करता है।
जब वह चाहता है तब एक स्वरूप स्वयं ही रहि जाता है।
वाहिगुरू की अनेक शक्तियां हैं कथन में नहीं आ सकतीं।
जिस को चाहता है उस को अपने संग मिला लेता है।
किस को समीप और किस को दूर कहिये ?
आप ही अपने आप पूर्ण हो रहा है।
जिस के अन्दर बस स्वयं जनाता है,
हे नानक ! उस पुरुष को अपना स्वरूप दिखाता है ॥ ५ ॥
सब भूतों में स्वयं ही पूर्ण हो रहा है।
सब नेत्रों में स्थिर हो कर स्वयं ही देखने वाला है।
सब सामग्री याने जगत् जिस का शरीर है।
अपने सुयश को आप ही सुनता है।
जन्म और मरण वाहिगुरू ने एक खेल बनाया है।
माया को अपनी आज्ञा में रक्खा है।
सब के बीच रहता हुआ अलेप रहता है।
जो कछु कहना होता है सो स्वयं ही कहता है।

आगिआ आवै आगिआ जाइ ॥
नानक जा भावै ता लए समाइ ॥ ६ ॥

इस ते होइ सु नाही बुरा ॥
ओरै कहहु किनै कछु करा ॥
आपि भलो करतूति अति नीकी ॥
आपे जानै अपने जी की ॥
आपि साचु धारी सभ साचु ॥
ओति पोति आपन संगि राचु ॥
ताकी गति मिति कही न जाइ ॥
दूसर होइ त सोझी पाइ ॥
तिस का कीआ सभु परवानु ॥
गुर प्रसादि नानक इहु जानु ॥ ७ ॥
जो जानै तिसु सदा सुखु होइ ॥
आपि मिलाइ लए प्रभु सोइ ॥
ओहु धनवंतु कुलवंतु पतिवंतु ॥
जीवनमुकति जिसु रिदै भगवंतु ॥
धंनु धंनु धंनु जनु आइआ ॥
जिसु प्रसादि सभु जगतु तराइआ ॥
जन आवन का इहै सुआउ ॥

यह जीव वाहिगुरु आज्ञा में आता है और उसी की आज्ञा में जाता है।

हे नानक ! जब वाहिगुरु चाहता है तब अपने संग मिला लेता है ॥ ६ ॥

वाहिगुरु से जो कछु होता है बुरा नहीं होता।

बताओ और किसी ने क्या किया है ?

प्रभु स्वयं भला है उस के कर्त्तव्य अति भले हैं।

वाहिगुरु अपने हृदय की आप ही जानता है।

वाहिगुरु स्वयं सत्य है, जो धारण किया है वह भी सत्य है।

ओत पोत हो कर अपने संग रच रहा है।

वाहिगुरु की गति और मर्यादा कही नहीं जाती।

दूसरा कोई प्रभु सम हो तब उस की सूझ पाय।

वाहिगुरु का किया सब परवानु भाव असेट है।

हे नानक ! गुरु-कृपा कर यह गुण निश्चय कर ॥ ७ ॥

जो पुरुष (पूर्वोक्त बात को) जानता है उस को नित्य सुख होता है।

वाहिगुरु उस को अपने में मिला लेता है।

सो पुरुष धनवान, कुलवान और माननीय है,

पुनः वह जीवन-मुक्त है जिस के हृदय में भगवन्त है।

सो पुरुष स्वयं धन्य है उस का जीवन धन्य है और जगत् में आना भी धन्य है,

जिस की कृपा से सब संसार तराया जाता है।

भक्त-जन के आने का यही मुख्य प्रयोजन है।

जन कै संगि चिति आवै नाउ ॥
आपि मुकतु मुकतु करै संसारु ॥
नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु ॥८॥

सलोकु

पूरा प्रभु आराधिआ पूरा जा का नाउ ॥
नानक पूरा पाइआ पूरे के गुण गाउ ॥१॥

असटपदी ॥

पूरे गुर का सुनि उपदेसु ॥
पारब्रहमु निकटि करि पेखु ॥
सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥
मन अंतर की उतरै चिंद ॥
आस अनित तिआगहु तरंग ॥
संत जना की धूरि मन मंग ॥
आपु छोडि बेनती करहु ॥
साध संगि अगनि सागरु तरहु ॥
हरि धन के भरि लेहु भंडार ॥
नानक गुर पूरे नमसकार ॥ १ ॥

खेम कुसल सहज आनंद ॥

कि उस जन के संग कर के नाम चित्त में आय,

जो स्वयं मुक्त हो कर संसार को मुक्त करे,

हे नानक ! उस पुरुष को सर्वदा हमारी नमस्कार है ॥
८ ॥ २२ ॥

सलोकु

हम ने उसी प्रभु का आराधन किया है जिस का नाम पूर्ण है।

श्री गुरू नानक देव जी कहते हैं श्री वाहिगुरू के गुण गान कर हम ने उस पूर्ण को पाया है ॥ १ ॥

असटपदी

(हे सज्जनो) पूर्ण गुरू का उपदेश सुनो,

(और) पारब्रह्म को समीप कर के देखो।

श्वास श्वास गोबिन्द स्मरण करो।

जिस से मन के अन्दर की चिन्ता उतर जाय।

अनित्य पदार्थों की आशा और मन के सकल्पों का याग करो।

मन में सन्त-जनों की धूलि मांगो।

आपा भाव त्याग के (वाहिगुरू के संमुख) बिनती करो।

साधु-संग कर के अग्निसम संसार समुद्र से तर जाओ।

हरि-रूप धन के भंडार भर लो।

श्री सतगुरु जी कहते हैं हे सज्जनों ! पूर्ण गुरु को नमस्कार करो ॥ १ ॥

साधु-संग में मिल कर परमानन्द स्वरूप वाहिगुरु को भज, तब

साध संगि भजु परमानन्द ॥
नरक निवारि उधारहु जीउ ॥
गुन गोबिंद अंमृत रस पीउ ॥
चिति चितवहु नारायण एक ॥
एक रूप जा के रंग अनेक ॥
गोपाल दामोदर दीन दइआल ॥
दुख भंजन पूरन किरपाल ॥
सिमरि सिमरि नाम बारंबार ॥
नानक जीअ का इहै अधार ॥ २ ॥
उतम सलोक साध के बचन ॥
अमुलीक लाल एहि रतन ॥
सुनत कमावत होत उधार ॥
आपि तरै लोकह निसतार ॥

सफल जीवनु सफलु का संगु ॥
जाकै मनि लागा हरि रंगु ॥
जै जै सबदु अनाहदु वाजै ॥
सुनि सुनि अनद करे प्रभु गाजै ॥

प्रगटे गुपाल महांत कै माथे ॥
नानक उधरे तिन कै साथे ॥ ३ ॥
सरनि जोगु सुनि सरनी आए ॥

सुख, शान्ति और सहज-आनन्द प्राप्त होगा।

गोविन्द गुणानुवाद रूप अमृत रस को पान कर, (इस प्रकार नरक की निवृत्ति पूर्वक जीव का उद्धार कर लो।

चित्त में एक नारायण का चिन्तन करो,

जिस का रूप एक है और रंग अनेक हैं।

गोपाल दामोदर दीन दयालु

दुःख भंजन पूर्ण कृपालु आदि जिस के अनन्त नाम हैं।
सो ऐसे नाम का बार बार स्मरण करो।

हे नानक ! इस प्रकार जीव का उद्धार होगा ॥ २ ॥

साधु के वचन ही उत्तम श्लोक,

अमूल्य लाल और रत्न रूप हैं,

जिन के श्रवण और कमाने से उद्धार होता है।
(कमाने वाला) स्वयं पार हो कर और लोगों को पार करता है।

उस महापुरुष का जीवन भी सफल और संग भी सफल है,

जिस के मन में हरि-रंग लगा है,

(उस के अन्दर) जय जय का अनहद शब्द बजता है

(वह इस को) सुन सुन कर प्रसन्न होता है, और प्रभु उस के अन्दर प्रकट होता है।
उन महात्मा के मस्तक पर गोपाल प्रकट होते हैं।
हे नानक ! उन के संग और जीवों का भी उद्धार होता है ॥ ३

प्रभु को शरण-योग्य सुन हम शरण में आये हैं।

करि किरपा प्रभ आप मिलाए ॥
मिटि गए वैर भए सभ रेन ॥
अंमृत नामु साध संगि लैन ॥
सुप्रसंन भए गुरदेव ॥
पूरन होई सेवक की सेव ॥
आल जंजाल विकार त रहते ॥
राम नाम सुनि रसना कहते ॥
करि प्रसादु दइआ प्रभि धारी ॥
नानक निबही खेप हमारी ॥४॥
प्रभ की उसतति करहु संत मीत ॥
सावधान एकागर चीत ॥
सुखमनी सहज गोबिंद गुन नाम ॥
जिसु मनि बसै सु होत निधान ॥
सरब इछा ता की पूरन होइ ॥
प्रधान पुरखु प्रगटु सभ लोइ ॥
सभ ते ऊच पाए असथानु ॥
बहुरि न होवै आवन जानु ॥
हरि धनु खाटि चलै जनु सोइ ॥
नानक जिसहि परापति होइ ॥५॥
खेम सांति रिधि नव निधि ॥

कृपा कर के प्रभु ने स्वयं ही मिला लिया है।

सब वैर विरोध मिट गये और हम सब की धूलि हुये हैं।

साधु-संग में हम ने अमृत नाम लिया है।

(इस प्रकार) गुरुदेव जी सुप्रसन्न हुये है,

और सेवक की सेवा पूर्ण हुई है।

गृह धन्दे और विकारों से रहित हुये है।

राम नाम सुन कर रसना से उचारते हैं।

प्रभु ने कृपा की है, दया की है

(और) हे नानक ! हमारी खेप निर्विघ्न समाप्त हुई है ॥ ४ ॥

हे मित्र-रूप सन्तो (सावधान) सचेत और एकाग्र चित्त हो कर वाहिगुरु-स्तुति करो।

सुखमनी नामक गोबिन्द के गुण और नाम सहजे ही सुखों की मणि है।

यह (नाम) जिस के मन में बसे है सो गुणों का समुद्र हो जाता है।

उस की सब इच्छा पूर्ण होती है।

सो प्रधान पुरुष हो कर सब लोगों में प्रकट होता है।

सब से ऊंचा स्थान उस को प्राप्त होता है।

पुनः उस का जन्म मरण नहीं होता।

सो पुरुष हरि-नाम धन कमा के ले चला है,

हे नानक ! जिस को (उत्तम भाग्य वश) प्राप्त हो ॥ ५ ॥

कल्याण शान्ति, रिद्धि, नवनिद्धि,

बुधि गिआनु सरब तह सिधि ॥
बिदिआ तपु जोगु प्रभ धिआनु ॥
गिआनु स्रेसट ऊतम इसनानु ॥
चारि पदारथ कमल प्रगास ॥
सभ कै मधि सगल ते उदास ॥
सुंदरु चतरु तत का बेता ॥
समदरसी एक द्रिसटेता ॥
इह फल तिसु जन कै मुखि भने ॥
गुर नानक नाम बचन मनि सुने ॥ ॥ ६ ॥

इहु निधानु जपै मनि कोइ ॥
सभ जुग महि ता की गति होइ ॥
गुण गोबिंद नाम धुनि बाणी ॥
सिम्रिति सासत्र बेद बखाणी ॥
सगल मतांत केवल हरि नाम ॥
गोबिंद भगत कै मनि बिस्राम ॥
कोटि अप्राध साध संगि मिटै ॥
संत क्रिपा ते जम ते छुटै ॥
जा कै मसतकि करम प्रभि पाए ॥
साध सरणि नानक ते आए ॥ ७ ॥
जिसु मनि बसै सुनै लाइ प्रीति ॥

(उत्तम) बुद्धि, ज्ञान, सब सिद्धि

विद्या, तप, योग, प्रभु-ध्यान,

श्रेष्ठ ज्ञान, उत्तम स्नान, (धर्मादि)

चार पदार्थ, हृदय-कमल का प्रफुल्लित होना.

सब के बीच रहते हुए सब से उदास रहना.

सुन्दर, चतुर और तत्ववेत्ता होना,

सब में एक वाहिगुरू को देखने के कारण समदर्शी होना,

पूर्वोक्त सब फल उस पुरुष को प्राप्त होते हैं,

जो, हे नानक ! गुरू के वचनों द्वारा प्रभु के नाम को मन लगा कर सुनता है और मुख मे उचारता है ॥ ६ ॥

इस नाम निधान को जो कोई मन लगा कर जपे,
सब युगों में उस की गति होती है ।

इस बाणी में गोविन्द-गुण और केवल नाम ध्वनि है ।

जिस की महिमा स्मृति शास्त्र और वेदों ने वर्णन की है ।

सब मत मतान्तरों का अन्तिम सिद्धान्त केवल हरिनाम है,

जिस का विश्राम गोविन्द-भक्त के मन में है ।

(ऐसे भक्तरूप) साधु-संग कर के करोड़ों अपराध मिट जाते हैं

सन्त-कृपा कर यह जीव यम से छूट जाता है ।

जिस जिस के मस्तक पर वाहिगुरू ने बखशिश का लेख लिखा है ।

हे नानक ! सो जन साधु-शरण में आये हैं ॥ ७ ॥

जिस के मन में नाम बसे और जो प्रीति-पूर्वक श्रवण करे,

तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति ॥
जनम मरन ता का दूखु निवारै ॥
दुलभ देह ततकाल उधारै ॥
निरमल सोभा अंमृत ता की बानी ॥
एकु नामु मन माहि समानी ॥
दूख रोग बिनसे भै भरम ॥
साध नाम निरमल ता के करम ॥
सभ ते ऊच ता की सोभा बनी ॥
नानक इह गुणि नामु सुखमनी ॥ ८ ॥ २४ ॥

उसी पुरुष के चित्त में हरि प्रभु आता है।

वाहिगुरू उस के जन्म-मरण रूप दुःख को निवृत्त करता है,

और उस के दुर्लभ शरीर का उद्धार करता है।

निर्मल है उस की शोभा, और अमृत है उस की बाणी,

एक नाम जिस के मन में समाया है।

उस का दुःख, रोग, भय और भ्रम सब विनष्ट होता है।

नाम उस का साधु है और कर्म उस के निर्मल हैं।

सब से ऊंची शोभा उस की बन जाती है।

हे नानक ! पूर्वोक्त सब गुणों के कारण (प्रभु का) नाम सुखों
की मनी है ॥ ८ ॥ २४ ॥

मुद्रक :—ज्ञाना पिण्डीदास, आर्य्य प्रेस, दुर्ग्याणा अमृतसर ।